संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ २,५००
वार्षिक शुल्क ₹ २००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ ५.००

● वर्ष : १२८ ● अंक : २६ ● २० जुलाई, २०२३ (गुरुवार) श्रावण शुक्लपक्ष तृतीया सम्वत् २०८० ● दयानन्दाब्द १६६ वेद व मानव सृष्टि सम्वत्:१६६०८५३१२४

डी.ए.वी इंटर कालेज मीरापुर प्रयागराज का 110वाँ स्थापना दिवस समारोह का भव्य समापन

"स्वामी दयानन्द सरस्वती के आदर्शों की झलक बच्चों में" –देवेंद्रपाल वर्मा

"बच्चों को शिक्षित व सँस्कारित करना सबसे बड़ा धर्म" –पंकज जायसवाल

डी.ए.वी. इंटर कालेज, मीरापुर, प्रयागराज का ११०वाँ स्थापना दिवस समारोह के अवसर पर दिनांक १७ जुलाई, २०२३ को कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा ने उपस्थित जन समूह को सम्बोधित करते हुए कहा कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने व्यवहार भानु में शिक्षा के सम्बन्ध में स्पष्ट लिखा है कि "जिससे मनुष्य विद्या आदि शुभ गुणों की प्राप्ति और अविद्या आदि दोषों को छोड़ सदा आनन्दित हो सके, वह शिक्षा कहलाती है।" महर्षि दयानन्द के आदर्शों की झलक इन बच्चों में दिखाई पड़ती है। पूर्व काल में "स्त्री शूदौ नाधीया तामिति श्रुतेः" अर्थात् स्त्री व शूद्र को शिक्षा का अधिकार नहीं, को मूर्खों की कपोल कल्पना कहते हुए महर्षि ने यजुर्वेद २६/२ का उदाहरण देते हुए ईश्वर द्वारा सभी मनुष्यों को वेद वाणी पढ़ने का आदेश देते कहा है। आज विश्व में स्त्रियाँ शिक्षित होकर हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज कर रही हैं जो महर्षि की देन है।

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के मंत्री व डी.ए.वी. कालेज मीरापुर के प्रबन्धक श्री पंकज जायसवाल ने आये हुए अतिथि गणों का स्वागत करते हुए कहा कि बच्चों को शिक्षित व सँस्कारित करना मनुष्य का सबसे बड़ा धर्म है। अशिक्षित व सँस्कार विहीन युवा समाज व राष्ट्र के विकास में बाधक होते हैं। आज की वर्तमान दशा में वैदिक सनातन शिक्षा के द्वारा दिशाहीन युवाओं का उचित मार्ग दर्शन किया जा सकता है। जो आर्य समाज ही कर सकता है।

समारोह को मुख्य अतिथि डॉ. वी.के. सिंह, अध्यक्ष जिला पंचायत प्रयागराज, श्री गणेश केसरवानी नगर प्रमुख प्रयागराज, श्री गुरूप्रसाद मौर्य, विधायक, श्री संजय गुप्ता, पूर्व विधायक, डा. के. पी. सिंह पूर्व आई.जी., श्री आर. एस. वर्मा, पूर्व कमिश्नर, श्रीमती जमनोत्री गुप्ता समाज सेविका आदि ने सम्बोधित किया। कार्यक्रम का सँचालन डॉ. रंजना त्रिपाठी ने एवं धन्यवाद ज्ञापन श्री प्रमोद त्यागी, प्रधानाचार्य डी.ए.वी. ने दिया।

समारोह में आर्य प्रतिनिधि सभा के उपकोषाध्यक्ष श्री अजय श्रीवास्तव, प्रो. शेखर श्रीवास्तव, प्रो. आशीष खरे, प्रो. अर्चना पाठक, डॉ. ममता गुप्ता, डॉ. इमा सिरोठिया, सर्वश्रीमती अर्चना जायसवाल, अनुपमा श्रीवास्तव, आशा श्रीवास्तव, जूही श्रीवास्तव, आकांक्षा जायसवाल, डॉ० अंकिता चतुर्वेदी, डॉ० चित्रा चौरसिया, सर्व श्री धर्मेन्द्र सिंह, संतोष तिवारी, शिवशंकर वर्मा, विनोद कुमार झा, शंकरन, श्रीमती सुषमा अग्रहरि, श्रीमती अंजू वर्मा, श्रीमती रजनी सिंह सहित कॉलेज के छात्र-छात्रायें आदि उपस्थित थे।

वेदामृतम्

युंजते मनं उत युंजते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्महो देवस्य सवितुः परिष्टुतिः।।

–ऋ० ५।८१।१ यजुः ५/१४

विनय-विप्र लोग उस महान् विप्र के साथ अपना मन जोड़ते हैं। इसी का नाम योग है। ये योगी, ज्ञानी, महात्मा लोग केवल अपने मन को ही उस चिन्मय प्रभु के साथ नहीं जोड़ते अपितु बुद्धि को भी जोड़ते हैं। अपने क्षुद्र मन को उसके विभु मन के साथ जोड़ने से हमारा मन एकाग्र हो जाता है, रुक जाता है और अपनी बुद्धि के उसमें जुड़ने से हमें उसके आत्मज्ञान में से हमारे लिए उपयोगी सत्यज्ञान भी मिलने लगता है। इस प्रकार योगी, सन्त- पुरुष उस सर्व- प्रेरक देव की प्रेरणा से प्रेरित होकर अपने सब कर्म किया करते हैं। उनके ये सब शारीरिक वा मानसिक कर्म फिर उस परमदेव में आहुतिरूप होते हैं। प्रभु उन सबके उन होत्रों को स्वीकार करते जाते हैं और प्रतिदान में उन्हें उनके अनुकूल अपने ज्ञान को प्रेरित करते हैं। इस प्रकार उस एक महान् आत्मा में संसार के सब विप्र (सब साधु, महात्मा, योगी) हवन कर रहे हैं और अपना-अपना अभीष्ट पा रहे हैं। यह कितने आश्चर्य की बात है कि उस अकेले ही देवता ने अपने-आपको इन सब जीवात्माओं के साथ ठीक-ठीक न्याययुक्त सम्बन्ध से जोड़ रक्खा है और सम्बन्ध जुड़ने पर उस सम्बन्ध को परिपूर्णता के साथ निभा रहा है! वह कैसा वयुनावित् है कि अकेला ही इन सब प्राणियों के एक-एक ज्ञान व कर्म को अलग-अलग कैसे जान रहा है। जरा देखो कि ये ज्ञानी पुरुष ही नहीं, किन्तु न जानते हुए अनिच्छा से तो संसार के प्राणिमात्र ही उस एक यज्ञपुरुष के साथ जुड़े हुए हैं और वह अकेला ही उन सब अनगिनत जीवों के साथ न जाने कैसे परिपूर्ण न्याय कर रहा है। ऐसे अद्भुत देव की, उस अकेले सर्व-प्रेरक देव की हम जितनी स्तुति करें वह थोड़ी है, हम जितनी स्तुति करें वह थोड़ी है।

साभार-वैदिक विनय

ईमानदारी के मिसाल –आर्य

–मनमोहन कुमार आर्य

यह घटना सन् १६४७ में भारत के विभाजन से पूर्व की है। आर्यसमाज के विद्वान एवं शास्त्रार्थ महारथी पं. लोकनाथ तर्कवाचस्पति एक गांव में प्रचारार्थ आये थे। वहां बिजली नहीं थी। पानी के लिए कुएं पर जाना होता था वा रहट चलते थे। उपदेश्क भी प्रातः निकल जाते थे। पंडित जी एक दिन रहट पर गये थे। रहट चल रहा था। प्रातः काल के समय अपने कपड़े धोने के लिए वह रहट के निकट खड़े हो गये। सामने रास्ता था। उस पर चलकर एक अपरिचित व्यक्ति उनके पास आया। वह शाल ओढ़े हुए था। उसने पं. लोकनाथ जी को नमसते की। उसने अपनी शाल हटाई। एक पोटली उसके पास थी। उसने पंडित जी को कहा कि उसे सामने वाले गांव में जाना है। मैं अपनी इस पोटली को अपने साथ गांव में ले जाना नहीं चाहता। यदि आपको एतराज न हो तो मैं यह आपके पास छोड़े जा रहा हूं। लौट कर ले लूगां। उसने पंडित जी से पूछा कि आपको कितना समय लगेगा? पंडित जी ने कहा कि मुझे अपने यह तीन चार धोती कुर्ते धोने हैं। पंडित जी ने प्रश्न किया कि यदि आप समय पर न लौटे तो क्या होगा? उसने पंडित जी को कहा कि मैं जल्दी ही आ जाऊंगा। पंडित जी ने उसे कहा कि जहां इच्छा हो अपनी पोटली रख दो। समय पर आ जाना और अपनी पोटली ले जाना। मुझे परेशान न करना। वह व्यक्ति अपनी पोटली वहां रखकर चला गया। किसी कारण वह बताये समय पर न आ सका और उसे देर हो गई। पंडित जी उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने देखा कि वह व्यक्ति भागता हुआ आ रहा है। दूर से ही जोर जोर से बोल रहा था, पंडित जी मुझे क्षमा करना। पंडित जी मुझे क्षमा कर दें। मैं गांव में फंस गया था। पंडित जी ने उसे डांट लगाई और कहा कि दूसरे के समय की भी कदर करनी चाहिये।

पंडित जी ने उस व्यक्ति से पूछा कि आपकी इस पोटली में क्या है? उसने पंडित जी को बताया कि मेरी इस पोटली में डेढ़ सेर सोना है। यह मेरी बेटी के आभूषण हैं। उसे देने के लिए साथ लाया था। बेटी की ससुराल में कुछ विवाद चल रहा है। मन में विचार आया कि पहले विवाद की स्थिति का जायजा ले लूं। इस लिए यह पोटली को आपके पास रख दिया। पंडित जी ने पूछा कि क्या तुम मुझे जानते हो, फिर मेरे पास कैसे रख दिया? उस व्यक्ति ने पंडित जी को कहा कि आपको देखकर मैं जान गया था कि आप आर्यसमाजी हो। पंडित जी ने प्रश्न किया कि आर्यसमाजी इतने विश्वास का पात्र है, यह आपने कैसे जाना? उस व्यक्ति ने पंडित जी को अपनी आत्मकथा सुनाई। उसने कहा कि मैं अपने गांव

शेष पृष्ठ ४ पर.....

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

पंकज जायसवाल
मंत्री/सम्पादक

आर्य शिवशंकर वैश्य
प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय.....

''पक्की रजिस्ट्री''

संसार में दो प्रकार की वस्तुएं हैं। ''कुछ शीघ्र नष्ट हो जाती हैं, और कुछ लंबे समय तक चलती हैं।'' जैसे दूध दही फल सब्जियां इत्यादि १/२/४ दिन में शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। इसलिए उनका प्रयोग जल्दी-जल्दी कर लिया जाता है। अथवा उन्हें फ्रिज आदि ठंडे स्थान पर रखकर यदि सुरक्षित कर लिया जाए, तो कुछ अधिक समय तक भी वे वस्तुएं खराब नहीं होती।

''परंतु कुछ वस्तुएं लंबे समय तक टिक जाती हैं। जैसे कपड़े जूते चप्पल बर्तन बिस्तर मकान मोटर गाड़ी इत्यादि। ये वस्तुएं भी एक लंबे समय के पश्चात नष्ट हो जाती हैं।''

ऐसे ही हमारा और आपका शरीर है। यह भी ७०/८०/१०० वर्ष तक सामान्य रूप से जी सकता है। ''परंतु १०००/२००० वर्ष तो यह भी नहीं जिएगा। बहुत से लोग यह सोचते हैं कि ''हम हमेशा जिएंगे।'' ऐसा सोचना गलत है। क्योंकि यह बात प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों के विरुद्ध है।''

इसलिए बुद्धिमत्ता से काम लें। शरीर की सुरक्षा अवश्य करें। ''यह जीवन आपको लीज पर मिला है, 'पक्की रजिस्ट्री' के चक्कर में न पड़ें। अर्थात शरीर को अस्थाई अर्थात ७०/८०/१०० वर्ष तक जीने वाला मानें। इसे स्थाई निवास का घर न समझें।'' ''ईश्वर का ध्यान करें, समाज की सेवा करें, परोपकार करें। संध्या उपासना यज्ञ आदि शुभ कर्मों का आचरण करें। स्वस्थ रहें, व्यस्त रहें। तभी आप निश्चिंत और प्रसन्न होकर जी सकते हैं।''

लोग एक दूसरे से मिलते हैं, और व्यवहार करते हैं। परस्पर व्यवहार करने से एक दूसरे के गुण और दोष दिखाई देते हैं। ''जब दूसरों के गुण दिखाई देते हैं, तो सुख मिलता है। जब दूसरों के दोष दिखाई देते हैं, तो दुख मिलता है। दुख भोगना कोई चाहता नहीं। फिर भी जब व्यवहार में दूसरे व्यक्ति के दोष सामने आते हैं, तब उसके लोभ मोह क्रोध आदि दोषों के कारण दुख तो भोगना ही पड़ता है।''

इन दुखों से बचने के लिए व्यक्ति सोचता है, कि ''दूसरा व्यक्ति मुझे और दूसरों को भी बार-बार दुख देता है। जब तक इसका दोष दूर नहीं होगा, तब तक यह मुझे और दूसरों को भी दुख देता ही रहेगा। तो इससे होने वाले दुख से बचने के लिए क्यों न इसका दोष दूर किया जाए!'' ''यदि इसका दोष दूर हो जाएगा, तो यह व्यक्ति , दूसरों को दुख देने के पाप से बचेगा, और भविष्य में ईश्वर की ओर से इसको दंड भी नहीं मिलेगा। तब यह व्यक्ति स्वयं भी सुखी हो जाएगा तथा दूसरे लोग भी सुखी हो जाएंगे।'' ऐसा सोच कर वह दूसरे व्यक्ति को उसके दोष बताता है। यदि वह इस भावना से बताता है, तो वह बहुत अच्छा काम है, पुण्य का काम है।

जब कोई व्यक्ति आपके दोष इस भावना से बताए, तो आपको अपना सौभाग्य मानना चाहिए, कि ''कोई तो व्यक्ति है, जो मेरा सच्चा हितैषी है, जो मेरे दोषों को दूर करके मुझे पाप और दुखों से बचाना चाहता है। मेरे सुख के लिए अपना अमूल्य समय तथा बुद्धि खर्च कर रहा है।''

''ऐसी स्थिति में उस पर गुस्सा नहीं करना चाहिए, बल्कि उसका धन्यवाद और सम्मान करना चाहिए। क्योंकि वह आपका भला कर रहा है।''

इसके अतिरिक्त कुछ दुष्ट लोग भी होते हैं, जो दूसरों को दुख देने और बदनाम करने के लिए ही उनके दोष बताते हैं। ''ऐसे लोग भी २/४ बार व्यवहार करने से पहचान में आ जाते हैं।'' ''ऐसे दुष्टों से जरूर सावधान रहना चाहिए। उनसे दूर रहना चाहिए। झगड़ा तो उनसे भी नहीं करना चाहिए, बस अपनी सुरक्षा अवश्य रखनी चाहिए। ऐसा करने से ही आप का जीवन सुखमय बन सकता है, अन्यथा नहीं।''

-स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक की कलम से।

गतांक से आगे.....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ त्रयोदश समुल्लास

अथ कृश्चीनमत विषयं व्याख्यास्यामः

जबूर का दूसरा भाग

काल के समाचार की पहली पुस्तक

मत्ती रचित इञ्जील

८३- आकाश और पृथिवी टल जायेंगे परन्तु मेरी बातें कभी न टलेंगी

-ई० म०प० २४१ ऑ० ३५।।

(समीक्षक) यह भी बात अविद्या और मूर्खता की है। भला। आकाश हिल कर कहाँ जायगा? जब आकाश अति सूक्ष्म होने से नेत्र से दीखता ही नहीं। तो इसका हिलना कौन देख सकता है ? और अपने मुख से अपनी बड़ाई करना अच्छे मनुष्यों का काम नहीं।। ८३ ।।

८४-तब वह उनसे जो बाई ओर हैं कहेगा हे स्त्रापित लोगो। मेरे पास से उस अनन्त आग में जाओ जो शैतान और उसके दूतों के लिये तैयार की गई है।

-इं० म०प० २५१ आ० ४१।।

(समीक्षक) भला यह कितनी बड़ी पक्षपात की बात है। जो अपने शिष्य हैं उनको स्वर्ग और जो दूसरे हैं उनको अनन्त आग में गिराना। परन्तु जब आकाश ही न रहेगा लिखा तो अनन्त आग नरक बहिश्त कहाँ रहेगी ? जो शैतान और उसके दूतों को ईश्वर न बनाता तो इतनी नरक की तैयारी क्यों करनी पड़ती ? और एक शैतान ही ईश्वर के भय से न डरा तो वह ईश्वर ही क्या है ? क्योंकि उसी का दूत होकर बागी हो गया और ईश्वर उसको प्रथम ही पकड़ कर बन्दीगृह में न डाल सका न मार सका, पुनः उसकी ईश्वरता क्या ? जिसने ईसा को भी चालीस दिन दुःख दिया। ईसा भी उसका कुछ न कर सका तो ईश्वर का बेटा होना व्यर्थ हुआ। इसलिये ईसा ईश्वर का न बेटा और न बाइबल का ईश्वर, ईश्वर हो सकता है।। ८४।।

क्रमशः अगले अंक में...

दयानन्द शास्त्रार्थ प्रश्नोत्तर-संग्रह

नास्तिक तथा जैन मत

प्रश्न नं० २- सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३९७, पंक्ति २४ (प्रश्न) ''मनुष्यादिकों को ज्ञान है, ज्ञान से वे अपराध करते हैं, इससे उनको पीड़ा देना कुछ अपराध नहीं''-यह बात जैनमत में नहीं।

उत्तर- ग्रन्थ विवेकसार में पृष्ठ २२८ पंक्ति १० से लेकर पंक्ति १५ तक देख लीजिये, क्या लिखा है अर्थात् गरणाभ्योग और स्वजनादि समुद्री की आज्ञा जैसे विष्णुकुमार ने कुछ की आज्ञा से बौद्धरूप रचना करके निर्मिची नाम पुरोहित को कि वह जिनका विरोधी था, लात मारकर सातवें नरक में भेजा और ऐसी ही और बाते ।

प्रश्न नं० ३ सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ३९९ पंक्ति ३। और उसके ऊपर (अर्थात् पद्मशिला पर) बैठ के चराचर का देखना ।

उत्तर- पुस्तक रत्नसार भाग पृष्ठ २३ पंक्ति १३ से लेकर पृष्ठ २४ पंक्ति २४ तक देख लीजिये कि वहाँ महावीर और गौतम की पारम्परिक चर्चा में क्या लिखा है।

प्रश्न नं. ४- सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ४०१, पंक्ति २३। और उनके मत में न हुए वे श्रेष्ठ भी हुए तो भी उसकी सेवा अर्थात् जल तक भी नहीं देते ।

उत्तर-पुस्तक विवेकसार पृष्ठ २२१, पंक्ति ३ से लेकर पंक्ति ८ तक लिखा है, देख लीजिये कि अन्य मत की प्रशंसा या उनका गुणकीर्तन, नमस्कार प्रणाम करना या उनसे कम बोलना या अधिक बोलना या उनको बैठने के लिये आसनादि देना या उनको खाने-पीने की वस्तु, सुगन्ध, फूल देना या अन्य मत की मूर्ति के लिये चन्दन पुष्पादि देना, ये छः बातें नहीं करनी चाहिये ।

प्रश्न नं. ५ - सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ४०१, पंक्ति २० । किन्तु साधु जब आता तब जैनी लोग उसकी दाढ़ी मूंछ और सिर के बाल सब नोच लेते हैं ।

उत्तर - ग्रन्थकल्प भाष्य पृष्ठ १०८पंक्ति ४ से लेकर ६ तक देख लीजिये और प्रत्येक ग्रन्थ में दीक्षा के समय (अर्थात् चेला बनाने के समय) पांच मुट्ठी बाल नोचना लिखा है। यह काम अपने हाथ से अर्थात् चेले या गुरु के हाथ से होता है और अधिकतर ढूंढियों में है।

प्रश्न नं. ६-सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ४०२ पंक्ति २० से लेकर जो श्लोक जैनियों के बनाये लिखे हैं वे जैनमत के नहीं ।

उत्तर- मैं इसका उत्तर इससे पहले पत्र में लिख चुका हूँ (मिति कार्तिक सुदि ४, शनिवार) । आपके पास पहुंचा होगा, देख लीजिये।

प्रश्न नं. ७ सत्यार्थप्रकाश पृष्ठ ४०३, पंक्ति ११ । अर्थ और काम दोनों पदार्थ मानते हैं ।

उत्तर - यह मत जैनधर्म से सम्बन्धित सम्प्रदाय चार्वाक का है जिसने ऐसे-ऐसे श्लोक कि जब तक जिये, सुख से जिये, मृत्यु गुप्त नहीं, भस्म होकर शरीर में फिर आना नहीं आदि आदि अपने मत के बना लिये हैं। इसी प्रकार नीति और कामशास्त्र के अनुसार अर्थ और काम दो ही पदार्थ पुरुषार्थ और विधि से माने गये हैं।

यहाँ संक्षेप से आपके प्रश्नों का उत्तर दिया गया है क्योंकि पत्रों के द्वारा पूरी व्याख्या नहीं हो सकती थी। जब कभी मेरा और आपका समागम होवे तब आपको मैं ग्रन्थों के प्रमाण और युक्तियों के साथ ठीक-ठीक निश्चय करा सकता हूँ। और भी जो कुछ संदेह सत्यार्थ प्रकाश के १२ वें समुल्लास में होवे, (मेरठ आर्यसमाज के द्वारा) लिखकर भेज दीजिये। सबका ठीक उत्तर दे दिया जावेगा। अब मैं यहाँ थोड़े दिन तक रहूँगा और यदि आप वाला तक आ सक तो मिति १७ नवम्बर, सन् १८८० तक प्रातः आठ बजे से पहले-पहले देहरादून में और उसके पश्चात् आगरे में मुझको तार द्वारा सूचना देनी चाहिये कि मैं आप से शास्त्रार्थ अर्थात् पारस्परिक बात-चीत के लिये वहां पहुंच सकू। बुद्धिमान व्यक्ति के लिये इतना ही पर्याप्त है, अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं। मिति कार्तिक सुदि १३ रविवार, संवत् १९३७ ।

हस्ताक्षर दयानन्द सरस्वती (देहरादून)

वेद और ऋषि दयानन्द

-पं० मदनमोहन विद्यासागर

जब हम 'वेद' को भूलकर अपने को भुला चुके थे तब ऋषिवर दयानन्द ने लुप्त ज्ञान भंडार 'वेद' पुनः संसार को दिया, इसके लिए मानव-जाति सदा ऋषि की ऋणी रहेगी। इस लेख के लेखक पं. मदनमोहन विद्यासागर जी ने ऋषि दयानन्द जी के मत से वेद की महत्ता का वर्णन किया है, पाठक इस ऐतिहासिक लेख का स्वाध्याय करके लाभ उठायें। -डा. सुरेन्द्रकुमार,

आर्ष वाङ्मय की ऐसी मान्यता है कि सृष्टि के बनते समय, 'कविर्मनीषी', सृष्टिकर्तृता परमात्मा ने जनमात्र के लिए 'कल्याणी वेदवाणी' का विधान किया। उन्हें अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा, इन चार ऋषियों के हृदय में स्थापित कियाय हृद्यज्ञैरादधे (ऋ.)। इन चार ऋषियों से वेदप्रचार प्रारम्भ हुआ।

इनसे वेद चतुष्टय के ज्ञान को प्राप्त करके 'ब्रह्मा' नामक सर्वप्रथम वैदिक विद्वान् ने (ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव) वेदों के नियमित पठन-पाठन की परिपाटी चलाई।

इसके बाद मनु महाराज ने वेदों के सिद्धान्तों के अनुसार समाज-शास्त्र का विधान किया और 'मानव धर्मशास्त्र'- मानव धर्म संहिता या 'मनुस्मृति' की रचना की। इसमें विशेष बात यह थी कि वेदों के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था सुचारू रूप से प्रचालित की। अध्यापन का कार्य केवल 'ब्राह्मणों' को सौंपा।

कालचक्र घूमा और ज्यों-ज्यों नये-नये ग्रन्थ, ब्राह्मण, उपनिषद् आदि बनने लगे, त्यों-त्यों 'वेद' का अध्ययन कम होने लगा। पुराणकारों की दृष्टि में 'वयः' और बुद्धि में क्षीणता होने लगी। तब महर्षि वेदव्यास ने उस 'एक ही वेद ज्ञान को, जो विषय भेद से चार संहिताओं में विभक्त था तथा रचना भेद से तीन प्रकार का था, अध्ययन-अध्यापन की नई परिपाटी चलाई। वह यह कि एक-एक वेद का विशेष अध्ययन प्रारम्भ कराया। परिणामतः वेदी, द्विवेदी, त्रिवेदी, चतुर्वेदी इस प्रकार के अध्येता प्रारम्भ हो गये। इस प्रकार वेदों की रक्षा हुई।'

वेदव्यास के बाद श्री शंकर श्री कुमारिल भट्ट के समय तक कोई विशेष प्रयत्न वेदों के पठन-पाठन को सुसंगठित करने का नहीं हुआ। दौर्भाग्य से ज्ञानमार्गी श्री शंकर ने भी मूल वेदों की उपेक्षा की और अपने सारे कार्य का आधार उपनिषदें और पुराण रखे। ऐसे ही कर्मकाण्डी यज्ञिकों ने अपने कार्यों का आधार ब्राह्मण ग्रन्थ रखे थे। परिणामतः वेदों के प्रति उदासीनता रही।

उसके बाद श्री विद्यारण्य मुनि और सायणाचार्य ने वेदभाष्य करके वेदों की सुरक्षा का एक प्रयत्न किया। किया तो वेदों का भाष्य, (गीता, उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र का नहीं) पर अद्वैत मतानुसार तथा यज्ञपद्धति को स्वीकारते हुए। दार्शनिक दृष्टि से श्री सायण शंकर के अनुयायी दिखते हैं और वेदार्थ करने में यज्ञिक सम्प्रदायानुगामी।

इस बीच वेद के सम्बन्ध में एक आन्दोलन चला था, वह था बुध और महावीर का। दोनों ने इनके नाश का प्रयत्न किया।

इसके बाद ऋषि दयानन्द (१९वीं शती) के प्रादुर्भाव तक कोई उल्लेखनीय प्रयत्न वेदों के सम्बन्ध में नहीं हुआ। श्री राजा राममोहनराय ने वेदों की सर्वथा उपेक्षा की। ब्रिटिश राज होने पर यूरोप में जो संस्कृत और वेदों के सम्बन्ध में वृद्धि और अध्ययन प्रारम्भ हुए, उनका मुख्य उद्देश्य वेदों के सिद्धान्तों को इस प्रकार से विकृत और दूषित करके जनता के सामने रखना था कि इनके सम्बन्ध में घृणा का वातावरण पैदा हो और ईसाइयत की ओर झुकाव हो। इनका मुखिया था, मैक्समूलर।

अकस्मात् एक तेजस्वी महान् नक्षत्र विद्याकाश में चमका वह था ऋषि दयानन्द। उसने वेदों का उद्धार किया। विश्व के सामने उसके सच्चे स्वरूप को रखा, जो शुद्ध वैज्ञानिक था, अन्तर्मानववाद का पोषक था।

हमें ऋषि के वेद विषयक दृष्टिकोण को समझना चाहिये। आपने अपने ग्रन्थों में वेद के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है। ऋषि के समय भारत के विद्वानों में कुछ भ्रम थे। जैसे कि ब्राह्मण (उपनिषद् आरण्यक) भी वेद ही हैं, वेदों के पढ़ने का अधिकार स्त्री, शूद्र को नहीं है, वेद चतुष्टय कर्मकाण्ड के ग्रन्थ हैं आदि-आदि। पाश्चात्य विद्वानों ने कुछ भ्रम फैलाये थे। जैसे कि वेद ईसा से कुछ सौ वर्ष पहले बने हैं, पहले तीन 'वेद' थे, अथर्ववेद पीछे से जोड़ा गया, अथर्ववेद में जादू-टोना है आदि-आदि। ऋषि दयानन्द ने इन सबका खण्डन किया। साथ ही श्री सायण, उव्वट, महीधर आदि के विकृत भाष्यों का सप्रमाण खण्डन कर वेद का शुद्ध स्वरूप विश्व के सामने रखा। नीचे उनके ग्रन्थों से वेद-विषय में ऋषि के विचारों को सक्रम उपस्थित किया जाता है।

ज्ञान का आदिस्रोत, स्वतःप्रमाण वेद-

''ऋग्, यजुः, साम, अथर्व नाम से प्रसिद्ध जो ईश्वरोक्त सत्य विद्याधर्मयुक्त वेदचतुष्टय (संहिता मात्र मन्त्रभाग) है, वह निर्भ्रान्त नित्य स्वतः प्रमाण (ऋ. भू. ७७) हैं।'' इसके प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रन्थ की अपेक्षा नहीं। इससे मनुष्यों को सत्यासत्य का ज्ञान होता है, ये सत्यार्थप्रकाशक हैं (ऋ. भू. ६९८)। सूर्य व प्रदीप के स्वरूपतः स्वतः प्रकाशक व अन्य पृथिवी आदि पदार्थों के प्रकाशक होने की तरह ये स्वयं प्रमाणस्वरूप हैं (स्व. म. २, आ. उ. र. ६५, स. प्र. ७ स. २६६, ऋ. भू. ६८९, ऋ. भू. ७७, स. प्र. ८४-८५, ऋ. द. पत्र. विज्ञा. २११-२१२, २१८)। क्योंकि-

(१) उनमें प्रतिपादित सब सिद्धान्त सार्वभौम, सार्वजनिक और सर्वकालिक हैं। वे किसी देश काल विशेष में मानव जाति के किसी विशिष्ट समुदाय के निमित्त प्रकाशित नहीं किए गए (स. प्र. २६६, ७ समु.)।

(२) मनुष्य के सर्वतोमुख विकास के साधनों के द्योतक हैं।

(३) इनमें वर्णित कोई भी सिद्धान्त, बुद्धि विज्ञान व अनुभव के विरुद्ध नहीं। ये पक्षपातशून्य भ्रान्तिरहित ज्ञान का प्रतिपादन करते हैं (भ्रान्तिनि. शता. सं. ८७७)। वेदोक्त सब बातें विद्या से अविरुद्ध हैं (स. प्र. अनुभू. ३६३)।

(४) इनमें सृष्टिक्रम, प्रत्यक्षादि प्रमाण, आप्त और पवित्रात्मा के व्यवहार से विरुद्ध कोई कथन नहीं (स. प्र., ऋ. भू.)।

(५) इनमें ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव के अनुकूल वर्णन है (स. प्र. २६०, ७ समु.)।

(६) सृष्टि के आरम्भ से लेके आज पर्यन्त ब्रह्मा, मनु, व्यास, जैमिनी, दयानन्द आदि भी आप्त होते आये हैं, वे सब वेदों को नित्य सर्वविद्यामय अर्थात् सब विद्याओं के बीज और प्रामाणिक मानते चले आये हैं।

भारत भूमि में रचित वेद भिन्न साहित्य आर्ष (ऋषि प्रणीत, आप्तोपदिष्ट) व अनार्ष (स्वार्थी धूर्ततजन विरचित) दो प्रकार का है। (ब्रह्मा-मनु, जैमिनी से लेकर दयानन्द ऋषि पर्यन्त) अप्तोपदिष्ट (वेदों के व्याख्यान रूप) आर्षग्रन्थों का आर्ष परम्परानुसार वेदानुकूलतया ही प्रमाण है। ये सब ग्रन्थ पौरुषेय होने से परतः प्रमाण हैं। इनमें यदि कहीं वेद-विरुद्ध वचन हैं, तो वे अप्रमाण हैं (स्व. म. २, स. प्र. ८४, ३ समु., ऋ. द. प. व्य. वि. १ प. सं. २४, ४२, भ्रमो. शताब्दी सं. ८५८, ऋ. भू. ५९)।

मान्य ग्रन्थ- सबसे अधिक प्रामाणिक और मानने योग्य धर्मशास्त्र तो चार वेद हैं, उनके विरुद्ध वचन चाहे किसी भी पुस्तक में पाये जायें वे मानने योग्य नहीं हो सकते। वेद-बाह्य कुत्सित पुरुषों के ग्रन्थ त्याज्य हैं। वेद सत्य अर्थ का प्रतिपादक है अतः ब्रह्मा, मनु, जैमिनी, याज्ञवल्क्य से लेकर दयानन्द महर्षि पर्यन्त का मत है कि वेद विरुद्ध को न मानना और वेदानुकूल ही का आचरण करना धर्म है (स. प्र. ४१९, ११ समु., भ्रमोच्छे. ५५८-५६०, ऋ. भू. ७३, ऋ. द. प. व्य. वि. १ प. सं. १६-१७)।

प्रक्षेप--समय-समय पर पुराने ऋषियों के नाम से स्वार्थान्ध लोगों ने आर्ष ग्रन्थों में बहुत प्रक्षेप के दिये हैं, बहुत भाग निकाल भी दिये हैं और मिथ्यावादों से पूर्ण नये ग्रन्थ रच डाले हैं। इन प्रक्षिप्त भागों व ऐसे कपोलकल्पित अनर्थगाथा युक्त नवीन ग्रन्थों का त्यागना ही श्रेष्ठ है (ऋ. भू. ६९८, स. प्र. ८४३, ७ समु., स. प्र. ३५१, ११ समु.)। ब्रह्मवैवर्तृतादि अष्टादश पुराण विषमिश्रित अन्नवत् त्याज्य हैं।

एतद्भिन्न (आर्ष व आप्तोपदिष्ट) विश्वसाहित्य को सृष्टि के आरम्भ में पढ़ने और पढ़ाने की कुछ भी व्यवस्था नहीं थी और न कोई विद्या का ग्रन्थ ही था, इसलिये ईश्वर का वेदों का ज्ञान देना आवश्यक था।

यह ईश्वर की विद्या है। विद्या का गुण स्वार्थ और परार्थ दोनों सिद्ध करता है। परमेश्वर हमारे माता-पिता के समान हैं, हम उसकी प्रजा हैं। वह हम पर नित्य कृपा दृष्टि रखता है, सदैव करुणा धारण करता है कि सब प्रकार से हम सुख पावें। इससे ही उसने वेदों का उपदेश हमें दिया है और अपनी विद्या के परोपकार गुण की सफलता सिद्ध की है। जो परमेश्वर अपनी वेद विद्या का उपदेश मनुष्यों के लिये न करता तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि किसी को यथावत् प्राप्त न होती, उसके बिना परम आनन्द भी किसी को न होता। जैसे उस परम कृपालु ईश्वर ने प्रजा के सुख के लिये कन्द-मूल फल और घास आदि छोटे-छोटे भी पदार्थ रचे हैं, वैसे ही सब सुखों का प्रकाश करने वाली, सब सत्य विद्याओं से युक्त वेद विद्या का उपदेश भी प्रजा के सुख के लिये वह क्यों न करता?

परतः प्रमाण--(वैदिक साहित्य अथवा आर्ष-वाङ्मय)

चारों वेदों के ४ ब्राह्मण, ६ अङ्ग, ६ उपांङ्ग, चार उपवेद और ग्यारह सौ सत्ताइस (११२७) वेदों की शाखायें जो कि वेदों के व्याख्यान रूप ब्रह्मादि महर्षियों के बनाये ग्रन्थ हैं, वे परतः प्रमाण अर्थात् वेदों के अनुकूल होने से प्रमाण और जो इनमें वेद विरुद्ध वचन हैं, वे अप्रमाण हैं, (स्व. म. २)। (ऐसे ग्रन्थों का परिगणन स. प्र. ३ समु. तथा ऋ. भू. ३८९ में द्रष्टव्य है) जो कोई मनुष्य वेद और वेदानुकूल आप्त ग्रन्थों का अपमान करे, उसको श्रेष्ठ लोग जातिबाह्य कर दें। क्योंकि जो वेद की निन्दा करता है, वही नास्तिक कहाता है (स. प्र. १० स., ३४४) तथा द्र. उप. म.

क्रमशः.....६ पर

आध्यात्मिक प्रवचन

-आचार्य हरिशंकर अग्निहोत्री
(वैदिक प्रवक्ता)

आज हम नचिकेता के प्रश्न (शरीर के मरने के बाद आत्मा की क्या गति होती है?) पर यमाचार्य के उत्तर का विश्लेषण करेंगे। यमाचार्य नचिकेता को आत्मज्ञान के सन्दर्भ में उपदेश करते है -

न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

यमाचार्य नचिकेता के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि (न हन्यते हन्यमाने शरीरे) शरीर के मरने के बाद आत्मा नहीं मरता है । वैसे तो संक्षेप में यह उत्तर हो गया लेकिन इतने उत्तर से काम नहीं चलेगा इसीलिए आगे कहते हैं कि (न जायते न म्रियते) आत्मा न जन्म लेता है और न ही मरता है । ऐसा कहने पर पुनः नया प्रश्न उपस्थित होता है कि संसार में तो जन्म और मृत्यु देखने में आता है और यमाचार्य कह रहे हैं कि आत्मा का जन्म - मृत्यु नही होता है। इस प्रसंग को इस प्रकार समझेंगे कि संसार में ऐसी बहुत सी घटनायें होती है जो होती तो कुछ हैं और कही कुछ जाती हैं । जैसे रेलगाड़ी में यात्रा करने वाला एक दूसरे से कहता है कि देखना भाई कौन सा स्टेशन आगया और उत्तर देने वाला भी कह देता है कि अमुख स्टेशन आगया जबकि प्रश्न भी गलत है और उत्तर भी गलत है क्योंकि स्टेशन नही आता है यात्री स्टेशन पहुंचते हैं इसीलिए यह कहना चाहिए कि हम कौन से स्टेशन पहुंच गये या गाड़ी कौन से स्टेशन पहुंच गयी और उत्तर देने वाला कहना चाहिए कि हम या गाड़ी अमुख स्टेशन पहुंच गये।

एक और उदाहरण लेते हैं - हम यदि यह प्रश्न करें कि क्या सूर्य - उदय अस्त होता है तो कुछ लोग कहेंगे कि सूर्य उदय - अस्त होता है और कुछ लोग कहेंगे कि सूर्य उदय अस्त नहीं होता है और कुछ तो कहेंगे कि उदय अस्त होते दिखाई नहीं देता है क्या। लेकिन यथार्थ तो यही है सूर्य का उदय और अस्त कभी नहीं होता है लेकिन पृथ्वी के घूमने के कारण सूर्य का उदय अस्त दिखाई देता है वैसे ही जैसे गाड़ी में चलने वाले व्यक्ति को वृक्ष पीछे की ओर दौड़ते दिखते हैं। इसी प्रकार आत्मा का जन्म मृत्यु नही होता आत्मा शरीर में आजाती है तो जन्म सा दिखाई देता है और आत्मा शरीर को छोड़कर चली जाती है तो मृत्यु सी दिखाई देती है। अर्थात् आत्मा और शरीर के संयोग का जन्म है तथा आत्मा और शरीर के वियोग का नाम मृत्यु है। अभी हम आत्मा के विषय में समझ रहे हैं आगे हम शरीर के बारे में विस्तार से जानेंगे।

आत्मा की अमरता के विषय में योगेश्वर श्री कृष्ण जी महाराज अर्जुन को समझाते हुए कहते हैं -

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ।।

आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, आग जला नहीं सकती, जल गला नहीं सकता और वायु सूखा नहीं सकता । अर्थात् आत्मा को किसी भी साधन से नष्ट नहीं किया जा सकता है। आत्मा एक अविनाशी और अनादि तत्व है।

आत्मा के बारे में एक बात अधिक जानने योग्य है (जो ऐसा मानते हैं कि आत्मा तो परमात्मा में से बनती है, उनको यह बात अधिक ध्यान देकर समझनी चाहिए) यमाचार्य कहते हैं आत्मा किसी कारण से उत्पन्न नहीं हुआ है अर्थात् इसका कोई उपादान कारण नही है। आत्मा किसी में से बना नही है और ना ही इसमें से कुछ बनेगा।

इस विषय पर योगेश्वर श्री कृष्ण महाराज की बात बहुत प्रासंगिक लगती है वे कहते हैं कि -

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ।।

ऐसा कभी नहीं हुआ कि मैं किसी भी समय में नहीं था, या तू नहीं था अथवा ये समस्त राजा नहीं थे और न ऐसा ही होगा कि भविष्य में हम सब नहीं रहेंगे। अर्थात् हम पहले भी हमेशा थे और आगे भी हमेशा रहेंगे।

ऋग्वेद में अविनाशी व अनादि तत्वों के बिषय इस प्रकार कहा है -

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।।

(द्वा) जो ब्रह्म और जीव दोनों (सुपर्णा) चेतनता और पालनादि गुणों से सदृश (सयुजा) व्याप्य - व्यापक भाव से संयुक्त (सखाया) परस्पर मित्रतायुक्त, सनातन अनादि हैं य और (समानम्) वैसा ही (वृक्षम्) अनादि मूलरूप कारण और शाखारूप कार्ययुक्त वृक्ष अर्थात जो स्थूल होकर प्रलय में छिन्न - भिन्न हो जाता है, वह तीसरा अनादि पदार्थ य इन तीनों के गुण, कर्म और स्वभाव भी अनादि हैं । (तयोरन्यः) इन जीव और ब्रह्म में से एक जो जीव है, वह इस वृक्षरूप संसार में पाप पुण्य रूप फलों को (स्वाद्वत्ति) अच्छे प्रकार भोगता है, और दूसरा परमात्मा कर्मों के फलों को (अनश्नन्) न भोगता हुआ चारों ओर अर्थात् भीतर-बाहर सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है । जीव से ईश्वर, ईश्वर से जीव और दोनों से प्रकृति भिन्न-स्वरूप तीनों अनादि हैं।

यमाचार्य आत्मा के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहते हैं - (न) नहीं (जायते)उत्पन्न होता है (न) नहीं (म्रियते) मरता है (वा) या (विपश्चित) चेतनरूप, मेधावी (अयम्) यह (कुतश्चित्) कहीं से किसी उपादान कारण से (न, बभूव) उत्पन्न नहीं हुआ (कश्चित्) कोई (इससे भी उत्पन्न नहीं हुआ) (अजः) जन्म नहीं लेता (नित्यः) नित्य (शाश्वतः) अनादि हमेशा रहनेवाला (अयम्) यह (पुराणः) सनातन है (शरीरे) शरीर के (हन्यमाने) नाश होने पर (न, हन्यते)नष्ट नहीं होता।

अभी तक हमने समझा कि आत्मा (जीव) एक अविनाशी और अनादि तत्व है इसका जन्म-मृत्यु नही होता है । शरीर और आत्मा के संयोग का नाम जन्म कहलाता है और शरीर और आत्मा के साथ साथ चलने का नाम जीवन है तथा शरीर और आत्मा के वियोग का नाम मृत्यु है । शरीर छोड़ने पर आत्मा की क्या गति होती है इस पर आगे चर्चा करेंगे । इस चर्चा में अभी हम शरीर को समझेंगे।

पृष्ठ १ का शेष.....

का दुकानदार हूं। हमें लोग शाह जी कहते हैं। मेरे गांव के एक किसान ने अपनी बेटी के विवाह के लिए तीन सौ रूपये का कर्ज लिया था। उसने कहा था कि अगली फसल पर दे दूंगा। वह मेरा परिचित व मित्र था इसलिए मैंने उससे लिखा-पढ़ी नहीं की थी। मैंने जब उससे पैसे मांगे तो उसने कहा कि बारिस न होने के कारण फसल नहीं हुई। इसलिए आपके पैसे लौटा नहीं पाया। मैं कुछ समय बाद दूंगा। अगला साल भी निकल गया। कहता रहा कि फसल नहीं हुई, आपके पैसे अवश्य लौटाऊंगा। तीन साल बीतने के बाद वह मुकर गया। कहने लगा कि मैंने आपसे एक पैसा नहीं लिया। पंडित सत्यपाल पथिक जी के अनुसार उस समय के तीन सौ रूपये आज के तीन लाख व उससे भी अधिक होंगे। उसने बताया कि मैं जब उससे पैसे मांगता तो वह मुझे मारने को दौड़ता था।

अपना पैसा वसूल करने के लिए मेरे पास एक ही उपाय था कि मैं उस पर केस कर दूं। मेरा अनुमान था कि वह डर जायेगा और पैसे लौटा देगा। मैंने उसके खिलाफ केस दायर कर दिया। जज ने उस किसान से पूछा क्या तुमने इनसे तीन सौ रूपयों का कर्ज लिया था। वह व्यक्ति बोला कि कोई कर्ज नहीं लिया। जज ने मुझसे कहा कि कोई गवाह लाओं जिसके सामने पैसे दिये थे। मुझे याद आया उस किसान का १८-१९ साल का एक बेटा है। वह अपने आप को आर्यसमाजी कहता है। मेरे मन में विचार आया कि आर्यसमाजी सच बोलते हैं। अतः उस कर्जदार का बेटा झूठ नहीं बोलेगा। वह बेटा जवान था। और कोई साक्षी मेरे पास नहीं था। अतः मैने उसे ही अपना गवाह बनाया। उससे अदालत में पूछा गया कि आपके पिता ने पैसे लिये या नहीं? उसकी गवाही पर ही फैसला होना था। पिता ने अपने बेटे को आंखे दिखाई और इशारों में कहा कि वह मना कर दें। बेटे ने अदालत में कहा कि मेरे पिता ने बहिन की शादी के लिए किसी से तीन सौ रूपये का कर्ज लिया था और मां को रखने के लिए दिये थे। मैं तब वहां था और इस घटना को देख रहा था। दो तीन से बारिस नहीं हुई। जज साहब मेरे पिता ने किसी से पैसे अवश्य लिये थे। वह फिर बोला जज साहब, मेरे पिता का कर्जा मेरे नाम लिख लिया जाये। मैं वह कर्जा दूंगा। शाहजी ने पं. लोकनाथ जी को बताया कि उसकी सच्चाई को देख कर मैं रो पड़ा। मैं बोला बस, बस। मुझे पैसा नहीं चाहिये। इस घटना के कारण मुझे विश्वास था कि आपके आर्यसमाजी होने के कारण मेरी पोटली आपके पास पूर्ण सुरक्षित रहेगी।

आजादी से पहले आर्यसमाजियों की ऐसी साख थी। इससे मिलते जुलते आर्यसमाजियों के सत्य व्यवहार के अनेक उदाहरण हैं। हम आशा करते हैं कि पाठक इस सच्ची घटना को पसन्द करेंगे और प्रेरणा ग्रहण करेंगे। आर्यसमाजी इस घटना को पढ़कर अपना सिंहावलोकन करें और आवश्यकता हो वा सुधार कर सकें तो सुधार कर लें। इति।

अनिवार्य ज्योतिष

यह श्रावण 'अधिमास' नहीं

-डा० (आचार्य) रूपचन्द्र 'दीपक'।

इतिहास की उथल-पुथल ने, विदेशी शासन ने, और हमारे प्रमाद ने ज्योतिष को मतभेदों से भर दिया है। प्रथम दो कारण अब नहीं रहे, तृतीय को हटाना हमारे हाथ में है। अतः बिन्दु-बिन्दु को विचारकर बड़े दोष दूर करलें।

- समस्त पंचांगों में पूर्णिमा को १५वीं और अमावस्या को ३०वीं तिथि अंकित किया जाता है। अतः मास में कृष्णपक्ष पहले और शुक्लपक्ष को बाद में रखना महात्रुटि है। कृपया इस प्रकार रखिए :

मास=शुक्लपक्षकृष्णपक्ष।

- सौर वर्ष में १२ मास और तीन वर्षों में ३६ मास होते हैं, चन्द्र वर्ष में १२ मास ११ दिन, और तीन वर्षों में ३७ मास होते हैं।इन ३७ मासों में ३६ संक्रान्तियाँ होती हैं।जिस एक मास में संक्रान्ति नहीं होती, उसे 'अशुद्ध या मलमास' कहकर अधिक बताकर repeat किया जाता और तीन वर्षों में ३६ मास कर लिये जाते हैं।
- संक्रान्ति वह क्षण-भर का काल है, जब एक सौर मास पूर्ण होता और दूसरा मास प्रारम्भ होता है। कुछ बीती और आगामी संक्रान्तियों की तिथियाँ निम्नांकित हैं:-

१. मेष संक्रान्ति : २१ मार्च ०२.५५ बजे।
२. वृषभ सं० :२० अप्रैल १३.४४ बजे।
३. मिथुन सं० :२१ मई १२.३६ बजे।
४. कर्क संक्रान्ति :२१ जून २०.२८ बजे।
५. सिंह सं० :२३ जुलाई ०७.२१ बजे।
६. कन्या सं० :२३ अगस्त १४.३१ बजे; कहीं २४ अगस्त ५.४२ बजे।
७. तुला सं० :२३ सितम्बर १२.२० बजे।

- 'शुक्ल पहले कृष्णपक्ष बाद में' लेने पर वैशाख मास मेष और वृषभ संक्रान्तियों के मध्य पड़ा, अर्थात् वैशाख मास में कोई संक्रान्ति नहीं पड़ी। अतः पहले ३० दिन को 'अधिक वैशाख' और अगले ३० दिन को 'शुद्ध वैशाख' कहा गया।
- 'शुक्ल पहले' नियम से श्रावण मास में सिंह संक्रान्ति पड़ने वाली है।
- 'पहले कृष्ण और बाद में शुक्लपक्ष' लेकर प्रथम श्रावणमास ४ जुलाई से १ अगस्त तक और द्वितीय श्रावणमास २ अगस्त से ३१ अगस्त तक बताया जा रहा है। २३ जुलाई को सिंह संक्रान्ति और २३ अगस्त को कन्या संक्रान्ति है, २४ को मानें तो भी स्थिति वही रहती है।
- पहले शुक्लपक्ष लें या कृष्णपक्ष, श्रावणमास में संक्रान्ति अवश्य है। अतः श्रावण, वास्तव में अधिमास नहीं है।

राजनीति और ब्रह्मनीति

-स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

श्रीकृष्ण जैसे महान, आदर्श चरित्रधारी सच्चे नेता ने भारत के उद्धार के लिए यत्न किया। महाभारत राज्य (भारत एवं भारत से बाहर भारतीय राज्य) के पुनरुद्धार के लिए महान् यत्न किया। सफलता भी मिली।

एक बार नहीं दो बार मिली।एक तो राजसूययज्ञ के समय,लेकिन युधिष्ठिर के एक दिन के जुए के खेल ने सब चौपट कर दिया।फिर महाभारत युद्ध हुआ और महाभारत राज्य की स्थापना हुई।

श्रीकृष्ण महाराज की आँख बन्द हुई और यह विशाल भवन फिर भूमि पर गिर पड़ा।

दूसरी बार चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने मिलकर उसी महाभारत राज्य के लिए प्रयत्न किया। इस बार महाभारत राज्य तो नहीं बन पाया,किन्तु भारत राज्य फिर बन गया।

चाणक्य की आँख बन्द हुई और यह विशाल भारत मन्दिर फिर भूमि पर गिर पड़ा।

तीसरी बार छत्रपति शिवाजी ने फिर उस महाभारत राज्य के पुनरुद्धार के लिए यत्न किया।इस बार महाभारत राज्य तो नहीं,किन्तु महाराष्ट्र राज्य तो बन ही गया।

परन्तु शिवाजी की आँखें बन्द हुई और यह पवित्र महाराष्ट्र मन्दिर फिर भूमि पर गिर पड़ा।

ऐसा क्यों हुआ? वेद कहता है-

यत्र ब्रह्म च क्षत्रंच
सम्यूंचौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहाग्निना।।-(यजु० २०/२५)

अर्थः- हे प्रभो ! जहाँ ब्रह्मशक्ति और क्षात्रशक्ति परस्पर सहयोग से काम करती हों मुझे उस पवित्र देश में जन्म लेना अथवा उस पवित्र देश से मेरा प्रगाढ़ परिचय करा देना,जहाँ देवों का लोक-कल्याण-भावनारुप यज्ञाग्नि के साथ पूर्ण सहयोग हो।

ब्रह्मनीति का सूत्र है-यथा प्रजा तथा राजा। ब्राह्मण अपने विद्याबल, तपोबल, चरित्रबल से ऐसी प्रजा उत्पन्न करता है जो ठीक राजा चुनती है और दुष्ट राजा को अपनी जागरूकता से नष्ट कर देती है।

राजनीति ऐसी सुन्दर व्यवस्था उत्पन्न करती है कि -ब्राह्मजन उत्तम राजनीति का पूर्ण विकास करने में समर्थ होते हैं।

श्रीकृष्ण सच्चे क्षत्रिय थे, राजनीति ने अपना पूर्ण चमत्कार दिखाया, ब्रह्मनीति ने साथ नहीं दिया, विदुर शूद्र ही रहे, दुर्योधन क्षत्रिय कहलाया,कृष्ण चिल्लाते रह गये-

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं
गुणकर्मविभागशः ।।

परन्तु करते क्या? यह काम तो ब्राह्मणों का था। ब्रह्मनीति प्रगाढ़ निद्रा में पड़ी थी।

चाणक्य और चन्द्रगुप्त मिले। राजनीति और कूटनीति मिलकर चली,परन्तु ब्रह्मनीति चुप थी।चन्द्रगुप्त भी विफल ही रहा।

शिवाजी ने राजनीति का चमत्कार दिखाया, परन्तु ब्रह्मनीति फिर भी चुप थी अथवा उल्टी बह रही थी। शिवाजी को यज्ञोपवीत देने का विरोध हुआ। किसलिए? शिवाजी शूद्र है।

कलौ वा अंतयोः स्थितिः।

कलियुग में दो ही वर्ण हैं,एक ब्राह्मण,दूसरा शूद्र।भला हो बेचारे जागा भट्ट का,शिवाजी विधिपूर्वक छत्रपति तो बन गये और यदि कहीं शंकराचार्य का बस चलता तो-

तस्या हि शूद्रस्य वेद
उपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां
श्रोत्रपरिपूरणम्,
उच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेदः। -(ब्रह्मसूत्र शंकरभाष्य अपशूद्राधिकरण)

शूद्र यदि वेद का मन्त्र सुन ले तो उसके कान में लाख या सीसा पिघलाकर भर दो,वेद का मन्त्र उच्चारण करे तो जीभ काट दो,वेद की पुस्तक उठाकर चले तो हाथ काट दो,यह नियम लागू होता।

बेचारी अकेली राजनीति क्या करती?पवित्र महाराष्ट्र मन्दिर फिर भूमि पर गिर पड़ा।

अन्त में एक सच्चे ब्राह्मण ने वेदघोष सुनाया-

यथेमां वाचं कल्याणीमावादानि
जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च
स्वाय चारणाय च।।-(यजु० २६/२)

अर्थः- प्रभु कहते हैं-हे मेरे भक्तो ! तुम ऐसा मार्ग पकड़ो जिससे ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य,शूद्र तुम्हारे अपने और तुम्हारे पराये सब तक पहुँचे।

दयानन्द के रूप में ब्रह्मनीति ने पग उठाया। प्रजा जागी।इस बार तो भारत भी मिला। खण्ड भारत मिला,परन्तु यह आन्दोलन प्रजा का आन्दोलन है। अब राजनीति की प्रतिक्षा है।जिस दिन इस ब्रह्मनीति में राजनीति आ मिली उस दिन खण्ड भारत फिर से भारत और भारत से फिर महाभारत राज्य बनकर रहेगा, परन्तु यह विशाल साम्राज्य शस्त्रबल से नहीं शास्त्रबल से फैल सकेगा, इसलिए इसमें रुधिर प्रवाह नहीं,किन्तु ज्ञानगंगा का प्रवाह होगा। यह कार्य चिर साध्य है,परन्तु चिरजीवी भी है।

मानव राष्ट्र के भक्तो ! राजनीति को ब्रह्मनीति में मिला दो, देखो कैसा दृढ़ भवन बनता है, जिसे भूकम्प हिला न सके और आग जला न सके।

कोई आज सुने या न सुने सच्चा मार्ग यही है और केवल यही है। उपसर्ग छोड़ो और इस मार्ग को अपनाओ।

(वैदिक समाजवाद से उद्धृत)

अंधविश्वास

-अजय ओम प्रकाश

अंधविश्वास वह बीमारी है जिससे हमनें अतीत में इतना कुछ गवांया। इसकी पूर्ति करने में पता नहीं हमें कितने वर्ष और लगेंगे। हम जब इतिहास उठाते है भारत की अनेकों हार का कारण जानना चाहते तो उसमें सबसे बड़ा कारण हमेशा अंधविश्वास के रूप में सामने पाते हैं। याद कीजिए सोमनाथ के मंदिर का इतिहास जब सोमनाथ मंदिर का ध्वंस करने महमूद गजनवी पहुंचा था। तब सोमनाथ मंदिर के पुजारी इस विश्वास में आनन्द मना रहे थे कि गजनवी की सेना का सफाया करने के लिए भगवान सोमनाथ जी काफी है। लोग किले की दीवारों पर बैठे इस विचार से प्रसन्न हो रहे थे कि ये दुस्साहसी लुटेरों की फौज अभी चंद मिनटों में नष्ट हो जाएगी। वे गजनवी की सेना को बता रहे थे कि हमारा देवता तुम्हारे एक-एक आदमी को नष्ट कर देगा, किन्तु जब महमूद की सेना ने नरसंहार शुरू किया कोई ७० हजार हिंदू मंदिर के द्वार पर मारे गए और मंदिर तोड़कर महमूद ने करोड़ों की सम्पत्ति लूट ली। यदि उस समय ७० हजार हिन्दू इस अंधविश्वास में ना रहे होते और एक-एक पत्थर भी उठाकर गजनवी के सेना पर फेंकते तो सोमनाथ का मंदिर बच जाता और भारतीय धराधाम का सम्मान भी।

यह कोई इकलौती कहानी नहीं हैं जब धर्म की सच्ची शिक्षा देने वाले ऋषि-मुनियों के अभाव में अज्ञान व अन्धविश्वास, पाखण्ड एवं कुरीतियां वा मिथ्या परम्परायें आरम्भ हो गईं उनके स्थान पर ढोंगी, पाखंडियों के डेरे सजने लगे तब इसका परिणाम देश की गुलामी था। इनके कारण देश को अनेक विषम परिस्थितियों से गुजरना पड़ा और आज भी देश की धार्मिक व सामाजिक स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। इस स्थिति को दूर कर विजय पाने के लिए देश से अज्ञान व अन्धविश्वासों का समूल नाश करना जरूरी हैं वरना धार्मिक तबाही पिछली सदी से कई गुना बड़ी होगी।

सोमनाथ की भयंकर त्रासदी के बाद भी तथाकथित स्वयंभू लोगों ने जागरूकता फैलाना उचित नहीं समझा और इस एक मन्त्र के सहारे लोगों को प्रतीक्षा में बैठाकर कायर बना दिया कि "जब-जब धर्म की हानि होगी तब मैं अवतार बनकर आऊंगा" इसी अंधविश्वास में वीर जातियां धोखा खाती रही।

दुर्भाग्य आज सूचना क्रांति और तमाम तरक्की के इस दौर में भी यह संघर्ष जारी है, पाखंड जारी है, अंधविश्वास जारी हैं और आज ये लुटेरे अपने नये रूप धारण कर नये हमले कर रहे है। कोई बंगाली बाबा बनकर, भूत-प्रेत वशीकरण के नाम पर, कोई नौकरी दिलाने के बहाने मसलन आज भी ये गजनवी आशु महाराज के खोल से निकल रहे हैं।

काल बदले कलेंडर बदले, लेकिन अंधश्रद्धा अपनी जगह खड़ी रही। लोग झाड़-फूंक के जरिये गर्भ में पल रहे शिशु के लिंग का पता लगाने और उसे बदलने के दावें कर महिलाओं को आसानी से शिकार बना रहे है, धर्म-मजहब के नाम पर महिलाओं और लड़कियों के यौन शोषण को अंजाम दे रहे हैं।

यदि देखा जाये तो आज समाज में अंधविश्वास का बाजार इतना बड़ा और बढ़ चूका है कि जिसकी चपेट में पढ़े लिखें भी उसी तरह आते दिख रहे है जिस तरह अशिक्षित लोग। जबकि यह लंबे संघर्ष के बाद मानव सभ्यता द्वारा अर्जित किए गए आधुनिक विचारों और खुली सोच का गला घोंटने की कोशिश है। यदि सरकार राष्ट्रीय स्तर पर कानून बनाकर अंधविश्वास फैलाने वाले तत्वों के खिलाफ, उसका प्रचार-प्रसार कर रहे लोगो के खिलाफ एक्शन लेने का प्रावधान बना दे आज भी काफी कुछ समेटा जा सकता है। ये सच है कि कानून तो अमल के बाद ही समाज के लिए उपयोगी बन पाता हैं, किन्तु फिर भी उम्मीद है कि ४३ वीं सदी के दूसरे दशक में पहुंच चुके हमारे समाज को ऐसे ऐतिहासिक कानून की आंच में विश्वास और अंधविश्वास के बीच अंतर समझने में कुछ तो मदद मिलेगी। हमारा अतीत भले ही कैसा रहा हो पर आने वाली नस्लों का भविष्य तो सुधर ही जायेगा..

अंधविश्वासों से छुटकारा पाने के लिए पढ़िये महर्षि दयानंद सरस्वती का कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश।

●●●

पृष्ठ ३ का शेष.....

१०-१५६ पृ. से आगे।

पुराण- जो ब्रह्मादि के बनाये प्राचीन ऐतरेय, शतपथ, गोपथ और ताण्ड्य ब्राह्मण आदि ऋषि-मुनिकृत सत्यार्थ पुस्तक हैं, उन्हीं को पुराण, इतिहास, कल्प, गाथा और नाराशंसी कहते हैं, अन्य भागवतादि को नहीं (स्व. म. २३, आ. उ. र. ९६, ऋ. भू. ६८९, स. प्र. ३ समु. ८६) ये प्राचीन सत्य ग्रन्थ वेदों के अर्थ और इतिहासादि से युक्त बनाये गये हैं, परतः प्रमाण के योग्य हैं (ऋ. भू. ६९०)।

उपवेद- जो आयुर्वेद= वैद्यकशास्त्र, धनुर्वेद= शस्त्रास्त्र सम्बन्धी राजविद्या-राजधर्म, गान्धर्ववेद= गानविद्या और अर्थवेद= शिल्पशास्त्र हैं, इन चारों को उपवेद कहते हैं और ये भी वेदानुकूल होने से ही प्रमाण हैं (आ. उ. र. ९६, ऋ. भू. ६९०, स. प्र. ३ समु.)।

वेदाङ्ग- जो शिक्षा= पाणिन्यादिमुनिकृत, कल्प= मन्वादिकृत, मानव= कल्पसूत्रादि तथा आश्वलायनादिकृत श्रौत सूत्रादि, व्याकरण= पाणिनि मुनिकृत अष्टाध्यायी, धातुपाठ, गणपाठ, उणादिपाठ और पतंजलि मुनिकृत महाभाष्य, ऋषि - दयानन्द कृत वेदांगप्रकाश, निरुक्त= यास्कमुनि कृत निरुक्त और निघण्टु, छन्द= पिङ्गलाचार्य कृत सूत्र भाष्य, ज्योतिष= वसिष्ठादि ऋषिकृत रेखागणित और बीजगणित युक्त ज्योतिष। ये छः आर्ष सनातन शास्त्र हैं, इनको वेदांग कहते हैं। ये भी परतः प्रमाण के योग्य हैं (आ. उ. र. ९८, ऋ. भू. ६९२)।

उपांग= जिनका नाम षट्शास्त्र भी है। पहला- मीमांसा शास्त्र= व्यास मुनि आदिकृत भाष्यसहित, जैमिनी मुनिकृत पूर्व मीमांसा शास्त्र, जिसमें कर्मकाण्ड का विधान और धर्म तथा धर्मी दो पदार्थों से सब पदार्थों की व्याख्या की है। दूसरा- वैशेषिक शास्त्र= यह विशेषतया धर्म-धर्मी का विधायक शास्त्र है, जो कि कणादमुनिकृत सूत्र और प्रशस्तपाद भाष्यादि व्याख्या सहित है। तीसरा- न्याय शास्त्र= यह पदार्थविद्या का विधायक शास्त्र है, जो कि गौतम मुनि कृत सूत्र और वात्स्यायनमुनि कृत भाष्य सहित है। चौथा- योगशास्त्र= जिसके द्वारा उन पदार्थों का साक्षात् ज्ञान होता है, जिनका मीमांसा, वैशेषिक तथा न्यायशास्त्र से श्रवण तथा मनन के द्वारा आनुमानिक निश्चय होता है, जो पतंजलि मुनिकृत सूत्र और व्यास मुनिकृत भाष्य सहित है। पाँचवा- सांख्यशास्त्र= जिसके द्वारा प्रकृति आदि तत्त्वों की गणना होती है और उनका आत्मा से विवेक-ज्ञान होता है। जो कपिलमुनिकृत सूत्र और भागुरिमुनिकृत भाष्यसहित है। छठा- वैदिकशास्त्र= जो कि ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य और बृहदारण्यक ये दश उपनिषद् तथा व्याससुनिकृत सूत्र जो कि बौधायनवृत्त्यादि व्याख्यासहित हैं। ये छः वेदों के उपांग कहाते हैं और ये भी परतः प्रमाण के योग्य हैं (आ. उ. र. ९९, ऋ. भू. ६९२-६९३, स. प्र. ३ समु.)।

स्मृति= वेदानुकूल आप्तोक्त मनुस्मृत्यादि शास्त्र (स. प्र. ६२, ३ समु. - २१२, षष्ठ समु., स. प्र. ३४४, १० समु., स. प्र. ४ स. १५२, ३ स - ८५) द्र. उप. मं. ८-१२९-१३०। यह मनुस्मृति सृष्टि के आदि में बनी है (स. प्र. ११ समु.)।

अन्य आर्ष ग्रन्थ- वेदोद्धारक सत्यधर्म प्रचारक योगीश्वर परमहंस महर्षि दयानन्द विरचित समस्त ग्रन्थ भी सत्यार्थ के प्रकाशक होने से और वेदानुकूल होने से परतः प्रमाण के योग्य हैं। इनमें से सत्यार्थप्रकाश सर्वाधिक मान्य पुस्तक है, विश्वविद्याओं का भण्डार है, सन्मार्ग प्रदर्शक है।

वेदों के चार काण्ड-

वेदों का मुख्य तात्पर्य परमेश्वर ही के प्राप्त कराने और प्रतिपादित करने में है (स. प्र. ८३, ऋ. भू. २१०)। इस लोक और परलोक के व्यवहारों के फलों की सिद्धि और यथावत् उपकार करने के लिए सब मनुष्यों को वेदों के विज्ञान, कर्म, उपासना और ज्ञान इन चार विषयों के अनुष्ठान में पुरुषार्थ करना (ऋ. भू. २६१) चाहिये। क्योंकि इससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि होती है और यही मनुष्य-देह धारण करने का फल है (ऋ. भू. ९८-९९, १४३)। उ. उप. मं. ४- पृ. ३९, यहां तीन काण्ड लिखे हैं।

(१) विज्ञान काण्ड- उसको कहते हैं कि सब पदार्थों का यथार्थ जानना अर्थात् परमेश्वर से लेके तृणपर्यन्त पदार्थों का साक्षात् बोध होना और उनसे यथावत् उपयोग लेना व करना। यह विषय इन चारों में भी प्रधान है, क्योंकि इसी में वेदों का मुख्य तात्पर्य है। परिणामतः विज्ञान दो प्रकार का है-

(क) परमेश्वर का यथावत् ज्ञान और उसकी आज्ञा का बराबर पालन करना।

(ख) उसके रचे हुए सब पदार्थों (=प्राकृतिक वस्तुओं) के गुणों को यथावत् विचार करके उनसे कार्य सिद्ध करना अर्थात् कौन-कौन से पदार्थ किस-किस प्रयोजन के लिए रचे हैं, इसका जानना।

(२) कर्मकाण्ड- यह सब क्रिया प्रधान ही होता है। इसके बिना विद्याभ्यास और ज्ञान पूर्ण नहीं हो सकते। क्योंकि बाह्य व्यवहार तथा मानस व्यवहार का सम्बन्ध बाहर और भीतर दोनों के साथ होता है (ऋ. भू. १००-१०२, १४१)। वह अनेक प्रकार का है, किन्तु उसके दो मुख्य भेद हैं-

एक- परमार्थ भाग। इससे परमार्थ की सिद्धि करनी होती है। इसमें ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, उसकी आज्ञा पालन करना, न्यायाचरण अर्थात् धर्म का ज्ञान और अनुष्ठान यथावत् करना। मनुष्य इसके द्वारा मोक्ष-प्राप्ति में प्रवृत्त होता है।

जब मोक्ष अर्थात् केवल परमेश्वर की ही प्राप्ति के लिए धर्म से युक्त सब कर्मों का यथावत् पालन किया जाय तो यही निष्काम मार्ग है, क्योंकि इसमें संसार के भोगों की कामना नहीं की जाती। इसका फल सुखरूप और अक्षय होता है।

दूसरा मार्ग- लोकव्यवहार सिद्धि। इससे धर्म के द्वारा अर्थ, काम और उनकी सिद्धि करने वाले साधनों की प्राप्ति होती है। यह सकाम मार्ग है, क्योंकि इसमें संसार के भोगों की इच्छा से, धर्मानुसार अर्थ और काम का सम्पादन किया जाता है। इसलिए इसका फल नाशवान् होता है, जन्म-मरण का चक्र छूटता नहीं।

अग्निहोत्र से ले के अश्वमेध (राष्ट्रसेवा, राष्ट्रपालन, देश-रक्षण, राष्ट्र-समृद्धि, राष्ट्रविस्तार) पर्यन्त यज्ञ आदि इसके अन्तर्गत हैं।

विहित और निषिद्ध रूप में कर्म दो प्रकार के होते हैं। वेद में कर्त्तव्यरूप से प्रतिपादित ब्रह्मचर्य सत्यभाषणादि विहित हैं, वेद में अकर्त्तव्यरूप से निर्दिष्ट व्यभिचार, हिंसा, मिथ्याभाषणादि निषिद्ध हैं। विहित का अनुष्ठान करना धर्म, उसका न करना अधर्म और निषिद्ध का करना अधर्म और न करना धर्म हैं (स. प्र. ४१७, ११ समु.)

(३) उपासना काण्ड- जैसे ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं, उनको वैसा जान अपने को वैसा करना, योगाभ्यास द्वारा इनका साक्षात् करना, जिससे परमेश्वर के ही आनन्दस्वरूप में अपने आत्मा को मग्न करना होता है, उसको उपासना कहते हैं।

यह कोई यान्त्रिक व ज्ञानरहित क्रिया नहीं, जैसे बिना समझे किसी शब्द का या वाक्य का बार-बार जप करना।

(४) ज्ञान काण्ड- वस्तुओं के साधारण परिचय को ज्ञान कहते हैं (स. प्र. ४४, २ समु.)

(क) उपासना- काण्ड, ज्ञान-काण्ड तथा कर्मकाण्ड के निष्काम भाग में भी परमेश्वर ही इष्टदेव, स्तुति, प्रार्थना, पूजा और उपासना करने के योग्य है। कर्मकाण्ड के निष्काम भाग में तो सीधे परमात्मा की प्राप्ति की ही प्रार्थना की जाती है परन्तु उसके सकाम भाग में अभीष्ट विषय के भोग की प्राप्ति के लिये परमात्मा की प्रार्थना की जाती है।

अपरा विद्या, परा विद्या-

वेदों में दो विद्या हैं अपरा और परा। जिससे पृथिवी और तृण से ले के प्रकृति, जीव और ब्रह्मपर्यन्त सब पदार्थों के गुणों के ज्ञान से ठीक-ठीक कार्य सिद्ध करना होता है वह 'अपरा' और जिससे सर्वशक्तिमान् ब्रह्म की प्राप्ति होती है वह 'परा' विद्या है। इनमें 'परा' विद्या 'अपरा' विद्या से अत्यन्त उत्तम है, क्योंकि 'अपरा' विद्या का ही उत्तम फल 'परा' विद्या है।

धर्मशास्त्र-

वस्तुतः ये ईश्वरोक्त सत्यविद्यामय चारों वेद ही सब मनुष्यों के पवित्र आदि धर्मग्रन्थ और सच्चे विद्या पुस्तक (आ. वि. ४०, ऋ. भू. ७९७) (और सर्वोच्च धर्मशास्त्र ग्र. क.) हैं। इनकी शिक्षाओं पर आचरण करना मनुष्य मात्र का परम कर्तव्य है। 'ईश्वर की आज्ञा है कि विद्वान् लोग देश-देश और घर-घर जाके सब मनुष्यों को इनकी सत्यविद्या का उपदेश करें (ऋ. भू. ६६१)।' क्योंकि जो ग्रन्थ सत्यविद्याओं के प्रतिपादक हों, जिनसे मनुष्यों को सत्य-शिक्षा और सत्यासत्य का ज्ञान होता हो, ऐसे शास्त्रों के स्वाध्याय एवं तदनुकूल आचरण से शरीर, मन, आत्मा शुद्ध होते हैं (आ. उ. र. ९४)।

सत्यासत्य के निर्णायक साधन-

धर्माधर्म के ज्ञान अर्थात् सत्यासत्य के निर्णय के लिए चार साधन हैं।

१. सबसे मुख्य वेद (अर्थात् श्रुति), ये ईश्वरकृत होने से स्वतः प्रमाण हैं।

२. दूसरा स्मृति अर्थात् वेदानुकूल आप्तोक्त मनुस्मृत्यादि (स. प्र. १०, स. ३४४) धर्मशास्त्र, इनका प्रमाण वेदाधीन है, वेद के साथ विरोध होने पर ये अप्रमाण ठहरते हैं।

३. तीसरा सदाचार अर्थात् सज्जन धर्मात्मा आप्तजनों का सृष्टि के आदि से चला आ रहा वेदोक्त आचरण (=सनातन अर्थात् वेद द्वारा परमेश्वर प्रतिपादित कर्म (स. प्र. ३ स., ६२) धर्मानुरागी पूर्वजों का धर्म शिक्षानूकूल बर्तृताव। उप. मं. ९/१४३ तथा १२/१८०)। जो सत्पुरुष हो चुके हैं, उन्हीं का अनुकरण मनुष्य लोग करें (य. आ. भा. १२/११)।

४. चौथा अपने आत्मा का साक्षित्व (=प्रियता) है, अर्थात् जिसको आत्मा चाहता है, जैसा कि सत्य भाषण (स. प्र. ६२-६४, ३ सं., ११ स., ५०३, ऋ. भू. २१४)।

ऊपर मुख्य-मुख्य विषयों पर ऋषि दयानन्द का अभिप्राय लिखा है। वेदार्थ कितने प्रकार है, वेदार्थ के मुख्य साधन, ऋषि, देवता, छन्द, स्वर आदि के सम्बन्ध में ऋषि का अपना स्पष्ट मत है। -आर्योदय, वेदांक, मार्च १९६६ से साभार।

स्त्रोत- परोपकारी : महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुखपत्र का अप्रैल द्वितीय २०१९ का अंक (प्रस्तुति- (प्रियांशु सेठ)।

●●●

आखिर है ही क्या हिन्दू ?

–अजय ओमप्रकाश

कुछ लोग हिन्दू शब्द को ऋग्वेद में ढूंढ़ने का बौद्धिक विलास जैसा करते हैं, परन्तु वेद और उसके अंग में जैसे ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद,अथर्ववेद, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गन्धर्ववेद, अर्थवेद, ऐतरेय ब्राह्मण, शतपथ ब्राह्मण, ताण्ड्य ब्राह्मण, साम ब्राह्मण, विंश ब्राह्मण, गोपथ ब्राह्मण या किसी १०२७ वेद की शाखाओ में हिन्दू शब्द उपलब्ध नही है । इसके अतिरिक्त धर्म विधान ग्रंथ स्मृतियों जैसे कि- मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, वशिष्ठ स्मृति, पराशर स्मृति,अत्रि स्मृति इत्यादि, आध्यात्मिक ग्रंथ उपनिषदों और दार्शनिक ग्रंथ जैसे- योग, सांख्य, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदांत में भी हिन्दू शब्द अनुपलब्ध है। ऐतिहासिक ग्रंथ वाल्मीकि रामायण, २३५६० श्लोक और महाभारत १००२१७ श्लोकों में हिन्दू शब्द नही मिला। और न ही किसी नीतिशास्त्र जैसे- चाणक्य नीति, भर्तृहरि की नीतिशतकम्, शुक्राचार्यनीति, विदुरनीति या कौटिल्य अर्थशास्त्र में भी हिन्दू शब्द के दर्शन नही हुए। सम्पूर्ण संस्कारों के ग्रन्थ जैसे गृहसूत्र- गोभिल सूत्र, आश्वलायन सूत्र इत्यादि और १८ पुराण १८ उपपुराण में भी हिन्दू शब्द दिग्दर्शित नहीं हुआ। संस्कृत साहित्य जैसे मुद्राराक्षस, अभिज्ञानशाकुंतलम, पंचतंत्र, भरतनाटचम्, नैषधीयचरितम, हर्षचरितम्, दशकुमारचरितम् रघुवंश, इत्यादि में भी हिन्दू शब्द के दर्शन नही हुए।।

कुछ इतिहासकारो का तर्क यह है कि सिंधु नदी के किनारे बसने वाले को हिंदू कहा जाता है क्योंकि पर्सियन लोग स को ह बोलते है इसलिए सिन्धु सभ्यता हिन्दू हो गया । परन्तु पारसी लोगों का धर्म ग्रन्थ जंदावस्ता यानि अवेस्ता है इसका उच्चारण पारसी लोग स ही करते है ईरान का प्रमुख शहर इस्फहान है इसको भी स ही बोलते है ।यदि स को ह बोलते है तो ध का द कैसे हो गया। ? गुजरात के लोग 'स' को 'ह' उच्चारित करते हैं । यद्यपि भारतवर्ष में ११४९० किमी० हमने पैदल चलकर भ्रमण किया है परंतु किसी भारतीय को सिंधु नदी का नाम हिंदू नदी कहते नहीं सुना और ना ही किसी गुजराती से सिंधु को हिन्दू बोलते हुए सुना । एक सज्जन ने तर्क प्रस्तुत किया कि ऋग्वेद में शैन्धव शब्द आया है कालांतर में शैन्धव से हैन्दव हुआ और हैन्दव से हिंदू हो गया परंतु किसी वेद पाठी ने शैन्धव को हैन्दव आज तक नहीं पढ़ा । ऐसे बुद्धिवादियों के ऊपर हम दया ही कर सकते हैं।

वैसे भी शैंधव शब्द का संस्कृत भाषा में अर्थ घोड़ा और नमक होता है क्या घोड़े और नमक के आधार पर जाति का नाम हो सकता है ? इस प्रश्न का उत्तर उन्हीं बुद्धिमान मनीषी के पास हो सकता है।

अधिकांश इतिहासविदो का मानना है कि 'हिंदू' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम अरब के लोगों द्वारा प्रयोग किया गया था लेकिन कुछ इतिहासविद्दों का यह भी मानना है कि यह लोग पारसी थे जिन्होंने हिमालय के उत्तर पश्चिम के रास्ते से भारत में आकर वहां के बाशिंदों के लिए प्रयोग किया था।

धर्म और ग्रन्थ के शब्दकोष के वोल्यूम ६, सन्दर्भ ६६६ के अनुसार हिंदू शब्द का प्रादुर्भाव/प्रयोग भारतीय साहित्य या ग्रन्थों में मुसलमानों के भारत आने के बाद हुआ था।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'द डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में पेज नम्बर ७४ और ७५ पर लिखा है कि ''the word Hindu can be earliest traced to a source of a tantric in 8th century and it was used initially to describe the people] it was never used to describe religion'' पंडित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार हिंदू शब्द तो बहुत बाद में प्रयोग में लाया गया। हिन्दुज्म शब्द की उत्पत्ति हिंदू शब्द से हुई और यह शब्द सर्वप्रथम १९वीं सदी में अंग्रेजी साहित्कारों द्वारा यहाँ के बाशिंदों के धार्मिक विश्वास हेतु प्रयोग में लाया गया।

नई शब्दकोष ब्रिटानिका के अनुसार, जिसके वोल्यूम २० सन्दर्भ ५८१ में लिखा है कि भारत के बाशिंदों के धार्मिक विश्वास हेतु (ईसाई, जो धर्म परिवर्तन करके बने उनको को छोड़ कर) हिन्दुज्म शब्द सर्वप्रथम अंग्रेजी साहित्यकारों द्वारा सन् १८३० में प्रयोग किया गया था।

कहते हैं तो हिमालय से लेकर समुद्र पर्यन्त इस भूमि को हिंदुस्थान कहते है अर्थात् हिंदू भूगोल का शब्द है । यहाँ स्मरण रहे कि- उपर्युक्त श्लोक या पुस्तक की रचना मुस्लिम और ब्रिटिश शासन के मध्य का है किसी प्राचीन ऋषि मुनि द्वारा निर्मित नही है। जैसे मुगल काल में अकबर को खुश करने के लिए पण्डितो ने अल्लोपनिषद नामक ग्रन्थ की रचना कर डाली थी। तथाकथित विद्वान लोग ऋग्वेद के मन्त्र सप्त सिन्धवः से सिन्धु सभ्यता सिन्धु नदी की कल्पना करते है। स्मरण रहे कि वेद के शब्दों के आधार पर नगर नदी और मनुष्यों के नाम लोगों ने रखा, परन्तु वेदों में इतिहास ढूँढना बौधिक दिवलियापन का परिचय देना है।

अनेक विद्वान तर्क प्रस्तुत करते हैं कि पर्सियन लोग सिंधु के इस पार रहने वाले लोगो को हिन्दू कहते थे इसलिए हम लोग हिंदू हो गए। प्रश्न उत्पन्न होता है कि दूसरों के द्वारा प्रदान किए गए सम्बोधन को हमें क्यूँ स्वीकार करना चाहिए? फारसी भाषा में हिन्दू शब्द का क्या अर्थ होता है? इसे जानने का प्रयत्न करना चाहिए। भारत देश के गुजरात राज्य में एक गोण्डल नामक राज्य था वहाँ के महाराजा सर भगवत सिंह जी जो उस समय के सर्वाधिक शिक्षित एवं प्रगतिशील शाशक थे। उन्होंने गुजराती शब्दकोष तैयार कराया था जिसे भगवत गोमण्डल के नाम से जाना जाता है । इसमें २८१००० शब्दों के ८२२००० अर्थ है यह ६ Volume ६२६६ पृष्ठ का ग्रन्थ है। इस शब्दकोष के अन्तर्गत पृष्ट ६२१६ पर हिंदू का अर्थ चोर, लुटेरा, गुलाम, काला, हिन्दू धर्म को मानने वाला इत्यादि लिखा है । (१९८७ प्रवीण प्रकाशन) महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपने पुणे प्रवचन में हिंदू जाति सूचक शब्द के लिए इसी प्रकार के विचार प्रकट किए थे।।

हम सभी भारतवासी भारतीय है जिसका उल्लेख ऋग्वेद मे इसप्रकार है - आ नो यज्ञं भारती।। ऋग्वेद-१०/११०/८ भरत आदित्यस्तस्य भाः।। निरुक्त-८/१३' सहैष सूर्यो भर्तः।। (शतपथ-४/६/७/२१) भरत नाम सूर्य का है, सूर्य का प्रकाश ज्ञान का आलोक ही भारत है इस दृष्टिकोण से हमारा देश भारत है, और हमारी संस्कृति भारती है।।

तत्पश्चात प्रश्न उत्पन होता है कि हम लोगों का जातिगत नाम क्या है? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि हमलोगो का जातिगत नाम आर्य है। इसका प्रमाण सभी शास्त्रों में उपलब्ध है। परन्तु आधुनिक युग में तथाकथित विद्वान लोग हम भारतीयों को भ्रमित करने का प्रयत्न करते है कि आर्य विदेशी है, ये लोग ईरान से आए है । जबकि ईरान के स्कूलों में पढ़ाया जाता है कि- कुछ हजार साल पहले आर्य लोग हिमालय से उतर कर आये और यहाँ का जलवायु अनुकूल जानकर यही बस गए। (चंद हजार साल पेश जमाना माजीरा बजुर्गी अज निज़ाद आर्या अज कोहहाय कफ् काज गुजिश्तः बर सर जमीने की इमरोज मस्कने मास्त कदम निहाद्धन्द। ब चूं.आबो हवाय ई सर जमीरा मुआफिक तब' अ खुद याफ्तन्द दरीं जा मस्कने गुजीदत्र ब आंरा बनाम खेश ईरान खयादन्द।- देखो- जुगराफिया पंज कितअ बनाम तदरीस रहसल पंजुम इब्तदाई, सफा ७८य कालम १, मतब अ दरसनहि तिहरान, सन् हिजरी १३०९, सीन अव्वल व चहारम अज तर्फ विजारत मुआरिफ् व शरशुदः।।) ईरान के बादशाह सदा अपने नाम के साथ 'आर्यमेहर' की उपाधि लगाते रहे हैं। फारसी में 'मेहर' सूर्य को कहते हैं। ईरान के लोग अपने को 'सूर्यवंशी क्षत्रिय आर्य' मानते है। Prof-Maxmular ने Chips from a German Workshop 1967 Page No-85 में लिखा है कि ईरानियों के पूर्वज ईरान पहुँचने से पहले भारत में बसे थे। और वहाँ से ईरान गये थे।

आर्य शब्द के कुछ प्रमाण–

वेद- अहं भूमिमददामार्य्याय (ऋग्वेद-४/२६/२)

सर्वशक्तिमान ईश्वर कहते है कि यह पृथ्वी हम आर्यों के लिए प्रदान करते है। यज्ञमानमार्य्यम् (-ऋग्वेद) आर्य यजमान होता है अर्थात् परोपकारी, त्यागी, संयमी एव तपस्वी होता है। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् (ऋ. ९/६३/५) अर्थात सारे संसार के मनुष्यों को श्रेष्ठ बनाओ।

मनुस्मृति- मद्य मांसा पराधेषु गाम्या पौराः न लिप्तकाः। आर्या ते च निमद्यन्ते सदार्यावर्तूत वासिनः। अर्थात वे ग्राम व नगरवासी जो मद्य, मांस और अपराधों में लिप्त न हों तथा सदा से आर्यावर्तूत के निवासी हैं वे 'आर्य' कहे जाते हैं। The denizens of villages and cities who do not drink] eat meat] committ no crime and are residents of Aryavarta are to be hailed as Aryas-

वाल्मीकि रामायण - सर्वदा

मिगतः सदिशः समुद्र इव सिन्धुभिः ।

आर्य सर्व समश्चौव व सदैवः प्रिय दर्शनः ।। -(बालकाण्ड) अर्थ-- जिस तरह नदियाँ समुद्र के पास जाती हैं उसी तरह जो सज्जनों के लिए सुलभ हैं वे 'आर्य' हैं जो सब पर समदृष्टि रखते हैं हमेशा प्रसन्नचित्त रहत-

महाभारत- न वैर मुद्दीपयति प्रशान्त, न दर्पयासे हति नास्तिमेति।

न दुगेतोपीति करोव्य कार्य, तमार्य शीलं परमाहुरार्या।। (उद्योग पर्व)

अर्थ- जो अकारण किसी से वैर नहीं करते तथा गरीब होने पर भी कुकर्म नहीं करते उन शील पुरुषों को 'आर्य' कहते हैं।

वशिष्ठ स्मृति में- कर्तव्यमाचरन काम कर्तव्यमाचरन। तिष्ठति प्रकृताचारे यः स आर्य स्मृतः ।। अर्थ- जो रंग, रुप, स्वभाव, शिष्टता, धर्म, कर्म, ज्ञान और आचार-विचार तथा शील-स्वभाव में श्रेष्ठ हो उसे 'आर्य' कहते हैं।

निरुक्त में यास्काचार्य जी लिखते हैं 'आर्य ईश्वर पुत्र। अर्थ—'आर्य' ईश्वर के पुत्र हैं।

विदुर नीति- आर्य कर्मणि रज्यन्ते भूति कर्माणि कुर्वते। हितं च नामा सूचन्ति पण्डिता भरतर्षभ ।।-(अध्याय १ श्लोक ३०) अर्थः- भरत कुल भूषण! पण्डित जन्य जो श्रेष्ठ कर्मों में रुचि रखते हैं, उन्नति के कार्य करते हैं तथा भलाई करने वालों में दोष नहीं निकालते हैं वही 'आर्य' हैं।

गीता में अनार्य जुष्टम स्वर्गम् कीर्ति करमर्जुन। (अध्याय २ श्लोक २)

अर्थः- हे अर्जुन तुझे इस असमय परिस्थिति में यह अनार्यों जैसा मोह किस हेतु प्राप्त हुआ क्योंकि न तो यह श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा आचरित है और न स्वर्ग को देने वाला है तथा न कीर्ति की और ही ले जाने वाला है (श्री कृष्ण जी यहां पर अर्जुन के अनार्यता के लक्षण दर्शाये हैं)।

चाणक्य नीति अभ्यासाद धार्यते विद्या कुले शीलेन धार्यते।

गुणेन जायते त्वार्य,कोपो नेत्रेण गम्यते।।-(अध्याय ५ श्लोक ८) अर्थः- सतत अभ्यास से विद्या प्राप्त की जाती है, कुल-उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव से स्थिर होता है,आर्य-श्रेष्ठ मनुष्य गुणों के द्वारा जाना जाता है।

अमरकोष-महाकुलीनार्य सभ्य सज्जन साधवः।-(अध्याय २ श्लोक-६ भाग ३) अर्थ- जो आकृति, प्रकृति, सभ्यता, शिष्टता, धर्म, कर्म, विज्ञान, आचार, विचार तथा स्वभाव में सर्वश्रेष्ठ हो उसे 'आर्य' कहते हैं।

कौटिल्य अर्थशास्त्र में- व्यवस्थितार्य मर्यादः कृतवर्णाश्रम स्थितिः। अर्थ- आर्य मर्यादाओं को जो व्यवस्थित कर सके और वर्णाश्रम धर्म का स्थापन कर सके वही 'आर्य' राज्याधिकारी है।

पंचतन्त्र- अहार्यत्वादनर्धत्वाद क्षयत्वाच्च सर्वदा। अर्थ-आर्य लोग ! सब पदार्थों में उत्तम पदार्थ विद्या को ही कहते हैं।

धम्म पद- अरियत्पेवेदिते धम्मे सदा रमति पण्डितो। अर्थ-पण्डित जन सदा आर्यों के बतलाये धर्म में ही रमण करता है।

पाणिनि सूत्र- आर्यो ब्राह्मण कुमारयोः। अर्थः- ब्राह्मणों में 'आर्य' ही श्रेष्ठ है।

काशी विश्वनाथ मन्दिर के मुख्य द्वार पर- आर्य धर्मेतराणो प्रवेशो निषिद्धः। अर्थ- आर्य धर्म से इतर लोगों का प्रवेश वर्जित है।

आर्यों के सम्वत् में- जम्बू दीपे भरतखण्डे आर्यावर्ते अमुक देशान्तर्गते। ऐसा वाक्य बोलकर पौराणिक भाई भी संकल्प पढ़ते हैं अर्थात् यह आर्यों का देश 'आर्यावर्तूत' है।

-गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय।

चलभाष-६२८४६२८८१६

पंजी०सं० आर.एन.आई.-२२४१/५७ -आर्यमित्र २० जुलाई, २०२३ पोस्टल रजि.जी.पी.ओ. लखनऊ/एन.पी.-१४/२०१६-२१ एक प्रति ₹ ५.००

आर्य मित्र

नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०६४१२६७८५७१, मंत्री-०६४१५३६५५७६, सम्पादक-६४५१८८१६७७
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,

.....

.....

.....

आचार्य देवराज शास्त्री जी समाज, साहित्य और संस्कृति को समर्पित व्यक्तित्व।

-आचार्य जय प्रकाश शास्त्री

वदन प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचोवाचः।
करणं परोपकरणं येषां न, ते वन्द्याः ।।

'जिनका मुख प्रसन्नता का घर है, हृदय दया से युक्त है, अमृत के समान मधुर वाणी है,

जो सदा परोपकार करते हैं, वे किसके वन्दनीय नहीं होते हैं ।

आर्य जगत की महान विभूति, महर्षि दयानन्द सरस्वती एवं आर्य समाज के विचारों के संवाहक, आर्ष पाठ विधि के उन्नायक, शिक्षा, देशप्रेम, भारतीयता, राष्ट्रप्रेम, समाजसेवा में अहर्निश जीवन को समर्पित करने वाले युगपुरुष, महान तपस्वी, कर्मयोगी, स्वर्गीय आचार्य देवराज शास्त्री जी को कितने ही विशेषणों से अलंकृत किया जाए कम ही है। आचार्य जी बचपन से ही निर्भीक व्यक्तित्व के धनी थे तथा सदैव एक योद्धा की भांति अपने कर्तव्यपथ पर अग्रसर रहे। उनका व्यक्तित्व व कृतित्व एक समान था। वहीं उनके जीवन में हमें कोई बनावटीपन देखने को नहीं मिलता है।

आर्ष गुरुकुल यज्ञतीर्थ एटा का कुशल संचालन एवं संरक्षण उनके जीवन का जीवंत उदाहरण है। पूज्य आचार्य जी ने अपने जीवनकाल में आर्ष गुरुकुल यज्ञतीर्थ एटा के माध्यम से हजारों समर्पित वैदिक विद्वान, प्रोफेसर, लेक्चरर, अध्यापक, आर्य कार्यकर्ता, राष्ट्रभक्त तैयार किए जो देश व विदेशों में गुरुकुल एटा का नाम रोशन करते हुए समाज एवं राष्ट्र की सेवा में समर्पित भाव से अनवरत लगे हुए हैं । समस्त आर्य जगत में श्रद्धेय आचार्य देवराज शास्त्री जी का नाम बड़े ही श्रद्धाभाव व सम्मान के साथ लिया जाता है। दिल्ली, मुम्बई सहित देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों, कालेजों, स्कूलों, गुरुकुलों में एटा गुरुकुल से शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों की उपस्थिति से ही आचार्य जी के कार्यों का अंदाजा लगाया जा सकता है।

एटा जैसे स्थान पर गुरुकुल एटा की संपत्ति का इतने लम्बे समय तक रखरखाव करना इतना आसान नहीं था जितना हमें लगता है। समय-समय पर अनेक माफियाओं की गिद्ध दृष्टि सदैव इस सम्पत्ति पर रही है परंतु आचार्य देवराज शास्त्री जी ने अपने राजनैतिक और सामाजिक प्रभाव के चलते निर्भीकता से संघर्ष करते हुए आजीवन गुरुकुल की सम्पत्ति को अपने पुत्रवत सुरक्षित रखा । आचार्य जी का राजनैतिक एवं सामाजिक प्रभाव केवल एटा जनपद में ही नहीं था अपितु पड़ोसी जनपदों कासगंज, हाथरस, आगरा, मैनपुरी, फिरोजाबाद, मथुरा, इटावा, औरैया, फर्रुखाबाद, कानपुर सहित उत्तर प्रदेश के अनेकों जनपदों में भी था। उत्तर प्रदेश के बहुत बड़े भूभाग सहित भारत में आर्य जगत में आचार्य जी का नाम बड़े ही श्रद्धा व सम्मान से लिया जाता है।

श्रद्धेय आचार्य जी का पूरा जीवन समाजसेवा में ही व्यतीत हुआ । वही एक मात्र उनके जीवन का उद्देश्य बन गया था । वे एक ऐसे महान व्यक्तित्व के धनी थे जिस सभा, समारोह में पहुंचते लोगों का हुजूम उन्हें देखते ही उनके चरण स्पर्श करने एवं आशीर्वाद लेने हेतु दौड़ पड़ता था । वे एक सच्चे योगी थे । प्रातः काल एवं सांय काल योगाभ्यास, व्यायाम, प्राणायाम संध्या, यज्ञ, ध्यान साधना उनके जीवन के अभिन्न अंग रहे और जीवन पर्यंत उनकी दिनचर्या का हिस्सा बन कर रहे ।

आचार्य जी अनेक आर्य संस्थाओं के जनक भी कहे जाते हैं जिसका जीता जागता उदाहरण एटा जनपद की प्रसिद्ध आर्य समाज हिम्मतपुर काकामई है। जिसकी स्थापना का श्रेय श्रद्धेय आचार्य जी को ही जाता है। ग्राम हिम्मतपुर काकामई में आयोजित हुए एक आर्य समाज के कार्यक्रम में आचार्य जी ने मंच से उद्बोधन देते हुए ही आर्ष विद्यापीठ झज्जर के प्रस्तोता और उसी गांव के निवासी श्री ज्ञानवीर सिंह जी पुरुषार्थी से आग्रह किया कि ''इस गांव में आर्य समाज की गतिविधियां तो लगभग ५० वर्षों से चल रहीं हैं परंतु यहां स्थान अभाव के कारण कोई स्थाई भवन नहीं है। मेरी इच्छा है कि इस गांव में एक आर्य समाज की स्थापना की जाए जिसके लिए आप भूमि दान करें'' आचार्य जी के इस आग्रह को उन्होंने सहर्ष स्वीकार करते हुए उसी पल भूमि दान करने की घोषणा की और आज वहां पर एक सुंदर आर्य समाज का भवन बना हुआ है। जिसके माध्यम से महर्षि दयानन्द सरस्वती जी और आर्य समाज के विचारों को आगे बढ़ाया जा रहा है।

संस्कृत भाषा के उन्नयन के साथ-साथ हिंदी भाषा एवं साहित्य के संवर्धन हेतु आचार्य जी सदैव प्रयासरत रहे। कवियों को हमारे शास्त्रों में साधारण मानव नहीं माना है। कविर्मनीषी परिभू स्वयंभू अर्थात कवि मनीषी परिभू यानी सर्व व्याप्त है स्वयंभू अर्थात अनादि है । आचार्य जी इसी भाव से कवियों को विशेष सम्मान देते थे तथा पूर्ण मनोयोग से उन्हें सुनते थे। उनकी कविताएं सुनने के लिए ही अवसर विशेष पर प्रायः आर्ष गुरुकुल एटा में काव्य गोष्ठियां आयोजित कराते रहते थे । कवियों को श्रेष्ठ लेखन के लिए प्रोत्साहित करना नहीं भूलते थे।

ग्राम नावली निवासी शिक्षक के. पी. सिंह आर्य जी के भतीजे अमर शहीद वीरेश यादव जी की पुण्यतिथि पर कई वर्षों तक हुए अ.भा. कवि सम्मेलन के आशीष प्रदाता रहे। हर सम्मेलन में उनकी गरिमामयी उपस्थिति रही। गीत ऋषि गोपालदास नीरज पर जब एक टैली फिल्म बनी और निर्माता निर्देशकों ने सूटिंग के लिए आर्ष गुरुकुल एटा को पसन्द किया तो आचार्य श्री ने सहर्ष स्वीकृति देदी। आचार्य जी ने सारी व्यवस्था अपनी देख रेख में करवायी और नगर के समस्त मूर्धन्य साहित्यकारों को आमंत्रित किया। गुरुकुल एटा में नीरज जी की उपस्थिति में यह अदभुत और भव्य साहित्यिक आयोजन सम्पन्न हुआ। जिस किसी कवि या लेखक ने उन्हें अपनी प्रकाशित पुस्तक भेंट की तो उसका अध्ययन जरूर किया साथ ही अपनी समीक्षात्मक टिप्पणी भी लिखकर दी। एटा के सुविख्यात वरिष्ठ कवि प्रभात किरन जी सप्ताह में एक बार आचार्य जी से मिलने और अपनी नई रचनाएं सुनाने जरूर जाते थे। आचार्य जी को उनकी एक कविता बहुत पसंद थी कर रहा ऐलान भ्रष्टाचार कोई रोक ले, तू या तेरी सरकार कोई रोक ले।

आचार्य जी से कवियों व लेखकों को नए विचार शब्द और लेखन की नई थीम मिल जाया करती थी । वह स्वयं भी अच्छे लेखक थे।

श्रद्धेय आचार्य जी का निर्वाण दिनांक १५ जुलाई २०२२ को हो गया । ऐसे महान तपस्वी का इस जगत से जाना इस राष्ट्र की हानि है जिसकी पूर्ति सदियों में नहीं की जा सकती । उनके निधन से संपूर्ण आर्य जगत की अपूर्णीय क्षति हुई है।

महर्षि दयानंद सरस्वती जी के अनन्य भक्त पूज्य आचार्य देवराज जी शास्त्री ने ऋषियों की परंपरा और वेद के लिए पूरे जीवन जो प्रयास किया है वह अनुकरणीय है जिसे सदैव स्मरण किया जाएगा । ऋषि मुनियों की परम्परा के वाहक पूज्य आचार्य जी की वेदों, दर्शनों, उपनिषदों और व्याकरण के प्रति अटूट आस्था रही । उन्होंने भारतीय संस्कृति को उच्च स्तर पर पहुंचाने के लिए जीवन पर्यंत कार्य किया। वे अपने प्रवचनों में भारतीय संस्कृति, सभ्यता और भारतीय परंपरा पर बहुत बल दिया करते थे । आचार्य जी सादगी और सभ्यता की प्रतिमूर्ति थे। उनके व्याख्यानों, सदाचार, भारतीय संस्कृति सभ्यता के प्रति अटूट आस्था, व्यवहार, शिष्टाचार ने हजारों युवकों के जीवन को बदल दिया था । आर्य जगत में पूज्य आचार्य जी का नाम बड़े श्रद्धा और सम्मान के साथ लिया जाता है। पूज्य आचार्य जी आज भी हमारे दिलों में हैं और आजीवन रहेंगे। ऐसे महामानव के जीवन से हम सब सदैव प्रेरणा लेते रहेंगे ।

पूज्य गुरुवर के चरणों में कोटि कोटि नमन और वंदन।

राष्ट्रीय शराबबंदी संयुक्त मोर्चा के नेतृत्व में शराबबंदी कार्यकर्त्ताओं का सम्मेलन सम्पन्न।

आगामी ३० जनवरी २०२४ को शराबबंदी कानून बनाने की मांग को लेकर जंतर मंतर नई दिल्ली में आयोजित होने वाले राष्ट्रीय धरने के जन जागरण के लिए वह २ अक्टूबर २०२३ को राष्ट्रव्यापी ज्ञापन कार्यक्रम को लेकर आगरा मंडल के शराबबंदी कार्यकताओं का सम्मेलन दिनांक २० जुलाई, २०२३ को श्री पी के उपाध्यक्ष की अध्यक्षता व मोर्चा के राष्ट्रीय संरक्षक आचार्य संतोषानंद जी अवधूत, के मुख्य आतिथ्य में, राष्ट्रीय संयोजक श्री सुल्तान सिंह जी के विशेष आतिथ्य में, राष्ट्रीय महासचिव व समन्वयक मोर्चा श्री निहाल सिंह चौहान, म.प्र. प्रभारी श्री हरिओम गौतम जी के विशेष आतिथ्य में सम्पन्न हुआ ।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री सन्तोषानन्द जी , ने कहा कि शराबबंदी कानून को लेकर आप सभी जनजागरण करें नई दिल्ली में आप सभी को पूरा संरक्षण मिलेगा। राष्ट्रीय संयोजक श्री सुल्तान सिंह जी ने कहा कि आप सभी २ अक्टूबर २०२३ को शराबबंदी कानून बनाने की मांग को लेकर महामहिम राष्ट्रपति जी को ज्ञापन अपने जिला कलेक्टर को दें। ३० जनवरी २०२४ के लिए आप सभी अधिक से अधिक जंतर मंतर पहुंच कर शराबबंदी कानून की मांग को समर्थन करें। राष्ट्रीय महासचिव श्री निहाल सिंह चौहान ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा कि जंतर मंतर पर आकर संख्या बल के साथ समर्थन करें ,श्री चौहान ने प्रस्ताव रखा कि उ.प्र. सरकार उ.प्र. के धार्मिक स्थल पर शीघ्र ही शराब की दुकान, ठेकों का आवंटन रद्द करें व आगरा मथुरा मंडल के कार्यकर्ता मथुरा वृन्दावन धाम में शराब प्रतिबंधित करने के लिए आन्दोलन करें। म.प्र प्रभारी श्री हरिओम गौतम जी ने कहा कि सरकार शराब को लेकर दोहरी नीति बन्द करें एक तरफ तो शराब का प्रमोशन ठेके देकर , व दूसरी ओर मघ निषेध । दोहरी नीति बन्द हो। उन्होंने पहले गांव को शराब मुक्त करने का काम प्रारम्भ किया है, आगरा मंडल प्रभारी के प्रभारी व कार्यक्रम संयोजक श्री गिर्राज सिंह धाकरे , ने शराबबंदी आन्दोलन के रुप रेखा प्रस्तुत की। श्री जय नारायण कुशवाह जी ने कहा कि शराब बंदी आन्दोलन के आगरा मंडल में प्रणेता रहे चिम्मनलाल जैन के काम को आगे बढ़ाया जायेगा। सम्मेलन को श्रीमती विमला कुशवाह, हर्षिता यादव, श्री बाल योगी जी , फरुखाबाद से देवकी नंदन गंगवार, श्री रज्जन राजावत चक्कर नगर, इटावा, श्री श्याम सिंह तोमर उदी , आचार्य सोमेन्द्र प्रताप सिंह मेरठ सहित कई सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी सम्बोधित किया। सम्मेलन में सैकड़ों की संख्या में महिलाएं , युवा साथी , पत्रकार बंधु उपस्थित रहे।

राष्ट्रीय महासचिव निहाल सिंह चौहान ने सूचना दी किआगामी माह हर मंडल में सम्मेलन होंगे साथ ही इस तरह के जन जागरण सम्मेलन देश भर जिले में शराबबंदी संयुक्त मोर्चा के घटक संस्थाओं द्वारा आयोजित किए जा रहे हैं। इसी क्रम में ६ अगस्त २०२३ को राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक नई दिल्ली में होगी व म. प्र. मे ग्वालियर में भी कार्यकर्ता सम्मेलन होगा।

द्वारा-निहाल सिंह चौहान
राष्ट्रीय महासचिव
राष्ट्रीय शराब बंदी संयुक्त मोर्चा
६३०११०६६७३

निर्वाचन
जिला आर्य प्रतिनिधि सभा, लखनऊ

प्रधान	:	स्वामी वेदा अमृतानन्द सरस्वती
मंत्री	:	श्री कृष्णानन्द आर्य
कोषाध्यक्ष	:	श्री राजीव बत्रा

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–पंकज जायसवाल भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस,
5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।